मेरा राम

सोइ जानै जेहि देहु
जानत तुमहिं तुमहिं होइ

हृदयस्थकर्त्ता—

महात्मा गांधी।

अनुशब्दोल्लेखक—

कवीन्द्र बेनीप्रसाद वाजपेयी 'मंजुल'

प्रकाशक

मातृ-भाषा-मन्दिर

दारागंज, प्रयाग

प्रकाशक
हर्षवर्द्धन शुक्ल
व्यवस्थापक—
मातृ-भाषा-मन्दिर,
प्रयाग

प्रथम संस्करण की भूमिका

यह विश्वास कर कि 'मेरा राम' जिस प्रकार भौतिक, दैविक और आत्मिक दुर्बलताओं को दूर करने में समर्थ है, उसी प्रकार नैतिक, सामाजिक और धार्मिक भावनाओं में एकीकरण कार्य में अलौकिक चमत्कार के बल पर मनुष्य-मात्र को सफल बनाने में निस्सन्देह अव्यर्थ है ; मैंने इस रूप में जनता तक पहुँचाने का प्रयत्न किया है।

अपनी कई एक कल्पित भावनाओं के कारण मनुष्य को मनुष्य से भय होने लगा है, संसार का प्रत्येक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को इस प्रकार देख रहा है जिस प्रकार हिंसा करने वाले पशु जंगलों में एक-दूसरे को नित्य देखा करते हैं, जिसका विषमय परिणाम यह होता है कि मानव अपने मानव-जीवन की उपयोगिता के सुन्दर आदर्श को भूलकर पशु-जीवन की प्रणाली को ही अपना कर वह काम करने पर तुल जाता है, जो कि आगे चलकर उसी के लिए, उसी के राष्ट्र के लिए, उसी के समाज के लिए, उसी के धर्म के लिए और उसी की सन्तति के लिए न मिटने वाले कलंक का ही रूप धारण कर लेता है।

अब तक जो कुछ हुआ, उसे भूल कर आगे आने वाले युग में मानव का कलंक मानवता के कार्यों से नष्ट किया जा सके, इस उद्देश्य से 'मेरा राम' प्रकाशित हो रहा है। आशा की जाती है कि इससे मानव-मात्र का उतना हित अवश्य होगा जितना कि इसके हृदयस्थ-कर्त्ता महात्मा गांधी नित्य सोचा करते थे। अस्तु

द्वितीय संस्करण की भूमिका

मानवता के संसार में मानव-जीवन का नव-निर्माता 'मेरा राम' राम-बाण के ही समान अव्यर्थ सिद्ध हुआ, यह बड़े ही सन्तोष का विषय है ! हिन्दी-भाषा भाषी जनता ने इसके प्रति जैसा अनुराग प्रदर्शित किया है वह इसी से प्रमाणित है कि हमें इसका दूसरा संस्करण शीघ्र प्रकाशित करने के लिए बाध्य होना पड़ा है। आशा है, जनता के लिए यह पहिले की अपेक्षा अधिक उपयोगी सिद्ध होगा। अस्तु

हर्षवर्द्धन शुक्ल

विषय-सूची

मेरे राम

१—राम कौन ?

किसी एक अवसर पर महात्मा गाँधी से इस प्रकार को प्रश्न किया गया, "आप कहा करते हैं कि प्रार्थना में प्रयुक्त 'राम' का आशय दशरथ के पुत्र राम से नहीं है। आपका आशय "जगन्नियन्ता" से होता है। हमने भली भाँति देखा है कि 'रामधुन' में 'राजाराम, सीताराम' 'राजाराम, सीताराम' का कीर्तन होता है और जयकार भी 'सियापति रामचन्द्र की जय' का लगता है। मैं विनम्र भाव से पूछता हूँ कि यह सियापति राम कौन है ? यह राजाराम कौन है ? क्या ये दशरथ के सुपुत्र राम नहीं हैं ? ऊपर की पंक्तियों का अर्थ तो स्पष्टतया यही लगता है कि प्रार्थना में आराध्य जानकी-पति दशरथ-पुत्र राम ही हैं ?"

गोस्वामी तुलसीदास-रचित- राम-चरित-मानस के पाठक समझ गये होंगे कि यह प्रश्न उसी प्रकार का है जिस प्रकार का प्रश्न गरुड़ ने कागभुशुण्ड से, सती और पार्वती जी ने शिव जी से तथा भरद्वाज ने याज्ञवल्क्य से किया था और उन प्रश्नों के उत्तर को लेकर जनता में नित्य राम चर्चा हुआ करती है।

इसीलिए उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये "ऐसे प्रश्न का उत्तर मैं दे चुका हूँ मगर इसमें कुछ नया भी है, जो उत्तर की अपेक्षा रखता है। रामधुन में 'राजाराम', 'सीताराम' रटा जाता है, वह दशरथ-

नन्दन राम नहीं तो कौन हैं ? तुलसीदास जीने तो इसका उत्तर*
दिया ही है, तो भी मुझे कहना चाहिए कि मेरी राय कैसे बनी

---

*राम सच्चिदानन्द दिनेसा । नहिं तहं मोह निसा लव लेसा ॥
सहज प्रकाश रूप भगवाना । नहिं तहँ पुनि विज्ञान विहाना ॥
हरष विषाद ज्ञान अज्ञाना । जीव-धर्म अहमिति अभिमाना ॥
राम ब्रह्म व्यापक जग जाना । परमानन्द परेस पुराना ॥

× × ×

निज भ्रम नहिं समुझहिं अज्ञानी । प्रभु पर मोह धरहिं जड़ प्रानी ॥
जथा गगन घन पटल निहारी । झांपेउ भानु कहहिं कुविचारी ॥
चितव जो लोचन अंगुलि लाये । प्रकट जुगल ससि तेहि के भाये ॥
उमा राम विषइक अस मोहा । नभ तम धूम धूरि जिमि सोहा ॥
विषय करन सुर जीव समेता । सकल एक ते एक सचेता ॥
सब कर परम प्रकाशक जोई । राम अनादि अवध पति सोई ॥
जगत प्रकास्य प्रकाशक रामू । मायाधीस ज्ञान गुन धामू ॥
जासु सत्यता से जड़ माया । भास सत्य इव मोह सहाया ॥

× × ×

आदि अन्त कोउ जासु न पावा । मति अनुमानि निगम अस गावा ॥
बिनु पद चलै सुने बिनु काना । कर बिनु कर्म करै विधि नाना ॥
तनु बिनु परस नयन बिनु देखा । ग्रहै घ्रान बिनु बास असेखा ॥
अस सब भांति अलौकिक करनी । महिमा जासु जाइ नहि बरनी ॥

× × ×

सोइ प्रभु मोर चराचर स्वामी । रघुवर सब उर अन्तरजामी ॥
विवसहु जासु नाम नर कहहीं । जन्म अनेक रचित अघ दहहीं ॥
सादर सुमिरन जे नर करहीं । भव वारिधि गोपद इव तरहीं ॥

(राम-चरितमानस —बालकाण्ड)

है। राम से रामनाम बड़ा* है। हिन्दू-धर्म महासागर है।

बन्दौं राम नाम रघुवर के। हेतु कृसानु भानु हिम करके ॥
विधि हरिहर मय वेद प्रान सो। अगुन अनूप सगुन निधान सो ॥
महामंत्र जोइ जपत महेसू। कासी मुकुति हेतु उपदेसू ॥
महिमा जासु जान गनराऊ। प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ ॥
जान आदि कवि नाम प्रतापू। भयउ सिद्ध करि उलटा जापू ॥
सहस नाम सम सुनि सिव बानी। जपि जेई प्रिय संग भवानी ॥

× × ×

समुझत सरित नाम अरु नामी। प्रीति परस्पर प्रभु अनुगामी ॥
नाम रूप दोउ ईश उपाधी। अकथ अनादि सुसामुझि साधी ॥
को बड़ छोट कहत अपराधू। सुनि गुन भेद समुझिहहिं साधू ॥
देखियहि रूप नाम आधीना। रूप ज्ञान नहिं नाम विहीना ॥
रूप विशेष नाम बिनु जाने। करतल गत न परहिं पहिचाने ॥
सुमिरिय नाम रूप बिनु देखे। आवत हृदय सनेह विसेखे ॥
नाम जीह जपि जागहिं जोगी। विरति विरञ्चि प्रपञ्च वियोगी ॥
ब्रह्म सुखहि अनुभवहिं अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा ॥
जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ। नाम जीह जप जानहिं तेऊ ॥
साधक नाम जपहिं लव लाये। होंहि सिद्ध अणिमादिक पाये ॥
जपहिं नाम जन आरत भारी। मिटहिं कुसङ्कट होंहि सुखारी ॥
राम भगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा ॥
चहूँ चतुर कहुँ नाम अधारा। ज्ञानी प्रभुहिं विशेष पियारा ॥
चहुँ युग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ। कलि विसेष नहि आन उपाऊ ॥
दोहा—सकल कामना हीन जे; राम भगति रस लीन।
नाम सुप्रेम पियूष ह्रद, तिन्हहुँ किये मन मीन ॥
अगुन सगुन दोउ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा ॥
मोरे मत बड़ नाम दुहूँ ते। किय जेहि युग निज बस निज बूते ॥
(रामचरित मानस)

उसमें अनेक रत्न भरे हैं। जितने गहरे पानी में जाओ, उतने ज्यादा रत्न मिलते हैं। हिन्दू-धर्म में ईश्वर के अनेक नाम हैं। सैकड़ों लोग राम-कृष्ण को ऐतिहासिक व्यक्ति मानते हैं, और मानते हैं कि जो राम दशरथ के पुत्र माने जाते हैं, वही ईश्वर के रूप में पृथ्वी पर आये और यह कि उनकी पूजा से आदमी मुक्ति पाता है। ऐसा ही कृष्ण के लिए है। इतिहास, कल्पना और शुद्ध सत्य आपस में इतने ओत-प्रोत हैं कि उन्हें अलग करना करीब-करीब असंभव है। मैंने अपने लिए सब संज्ञाएँ रक्खी हैं और उन सब में निराकार, सर्वस्थ राम को ही देखता हूँ। मेरे लिए 'मेरा राम' सीतापति दशरथ-नन्दन कहलाते हुए भी वह सर्वशक्तिमान ईश्वर ही है, जिसका नाम हृदय में होने से सब दुखों का नाश होता है।

२—मेरा आधार

किसी एक सज्जन ने एक बार महात्मा गांधी से प्रश्न किया "आप डाक्टरों से निदान क्यों करवाते हैं, वैद्यों से क्यों नहीं ?"

इसका उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने कहा, "क्योंकि डाक्टरों के पास शरीर-शास्त्र का जो ज्ञान है, वह वैद्यों के पास नहीं। वैद्यों का आधार त्रिदोष है। उन्होंने उसकी भी पूरी-पूरी खोज नहीं की है। डाक्टर हमेशा खोज करते रहते हैं, और या तो आगे बढ़ते हैं या पीछे हटते हैं। वे स्थिर नहीं। जो स्थिर हो जाता है, वह जड़ बन जाता है। दुनिया में कोई भी चीज स्थिर नहीं, अकेला ईश्वर स्थिर है, तिस पर वह अस्थिर भी कहलाता है। वह अलौकिक है।

फिर, डाक्टर और वैद्य मेरे मित्र हैं। उनमें डाक्टरों ने

मुझे कभी छोड़ा नहीं। उनमें से एक तो मेरे लिए मेरी सगी लड़की से भी ज्यादा बन गई है। सगी मुझको छोड़ सकती है। यह तो अपनी राज़ी खुशी से बनी है। यह मुझे कैसे छोड़े? इसलिए डाक्टर निदान करते हैं। वैद्य खुद जैसा-तैसा डाक्टरी निदान करते हैं या डाक्टर से कराते हैं या कराने की सलाह देते हैं। वैद्यों के पास कुछ दवाइयाँ हैं और वे उनका उपयोग कर लेते हैं। डाक्टर, हकीम और वैद्य तीनों कमाने का धंधा करते हैं। दूसरों का भला करने के लिए कोई इस धंधे को सीखता नहीं। यह दूसरी बात है कि इनमें से कोई कोई परोपकार करते हैं। एक कुदरती इलाज का जन्म ही परोपकार में से हुआ है। लेकिन आजकल तो वह भी कमाई का ज़रिया बन गया है। इस तरह पैसा परमेश्वर बन बैठा है।

आख़िर यह सच है कि डाक्टर मित्र मेरा निदान करते हैं। मगर मेरा आधार तो ईश्वर पर ही है, और वही मेरी हर एक साँस का स्वामी है। उसे देना होगा तो वह १२५ साल देगा, और न देना होगा, तो वही आज या कल उठा ले जायगा और डाक्टर मित्र मुँह बाये देखते रह जायँगे।"

३—हृदय में अंकित हुआ राम नाम

"दूसरे से बातचीत करते समय, मस्तिष्क द्वारा कठिन कार्य करते समय अथवा अचानक घबड़ाहट आदि के समय भी क्या हृदय में राम नाम का जप हो सकता है? अगर ऐसी दशा में भी लोग करते हैं, तो कैसे करते हैं?"

इस प्रकार के जिज्ञासापूर्ण प्रश्नों को उपस्थित करने वाले सज्जन को समझाते हुए महात्मा गांधी ने कहा, "अनुभव कहता

है कि मनुष्य किसी भी हालत में हो, सोता भी क्यों न हो, अगर आदत हो गई है और नाम हृदयस्थ हो गया है, तो जब तक हृदय चलता है तब तक राम नाम हृदय में चलता ही रहना चाहिए। अन्यथा यह कहा जाय कि मनुष्य जो राम नाम लेता है, वह उसके कंठ से ही निकलता है, अथवा कभी-कभी हृदय तक पहुंचता है; लेकिन हृदय पर नाम का साम्राज्य स्थापित नहीं हुआ है। जब नाम ने हृदय का स्वामित्व-पाया तब जप कैसे करते हैं यह सवाल पूछा ही न जाय। क्योंकि जब नाम हृदय में स्थान लेता है तब उच्चारण की आवश्यकता ही नहीं है। यह कहना ठीक होगा कि इस तरह राम नाम जिनको हृदयस्थ हुआ है. ऐसे लोग कम होंगे। जो शक्ति राम नाम में मानी गई है* उसके बारे में मुझे कोई शक नहीं है। हर एक आदमी

---

*दोहा——निरगुन ते इहि भाँति बड़, नाम प्रभाव अपार।
कहउँ नाम बड़ राम ते, निज विचार अनुसार॥
राम भगत हित नर तनु धारी। सहि सङ्कट किय साधु सुखारी॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा। भगत होहि मुद मङ्गल बासा॥
राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी॥
रिषि हित राम सुकेतु सुताकी। सहित सेन सुत कीन्ह बेबाकी॥
सहित दोष दुख दास दुरासा। दलइ नाम जिमि रवि निसि नासा॥
भञ्जेउ राम आप भव चापू। भव-भय-भञ्जन नाम प्रतापू॥
दण्डक बन प्रभु कीन्ह सुहावन। जनमन अमित नाम किय पावन॥
निसिचर निकर दले रघुनन्दन। नाम सकल कलि कलुष निकन्दन॥
दोहा——सबरी गिद्ध सुसेवकनि, सुगति दीन्ह रघुनाथ।
नाम उधारे अमित खल, वेद विदित गुनगाथ॥
राम सुकण्ठ विभीषन दोऊ। राखे सदन जान सब कोऊ॥
नाम अनेक गरीब निवाजे। लोक वेद वर विरद विराजे॥

इच्छामात्र से ही राम-नाम को अपने हृदय में अंकित नहीं कर सकेगा। उसमें अनथक परिश्रम की आवश्यकता है, धीरज की भी है। पारस-मणि को हासिल करने के लिए धीरज क्यों न हो? नाम तो उससे भी अधिक है।"

राम भालु कपि कटक बटोरा। सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा॥
नाम लेत भव सिन्धु सुखाहीं। करहु विचार सुजन मन माहीं॥
राम सकुल रन रावन मारा। सीय सहित निज पुर पगु धारा॥
राजा राम अवध रजधानी। गावत गुन सुर मुनि वर बानी॥
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती। बिनु श्रम प्रबल मोह दल जीती॥
फिरत सनेह मगन सुख अपने। नाम प्रसाद सोच नहिं सपने॥

दोहा——ब्रह्म राम ते नाम बड़, बरदायक बरदानि।
रामचरित सत कोटि महं, लिय महेस जिय जानि॥

नाम प्रसाद सम्भु अविनासी। सहज अमङ्गल मङ्गल रासी॥
सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी। नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी॥
नारद जानेउ नाम प्रतापू। जग प्रिय हरि हर हरि प्रिय आपू॥
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू। भगत सिरोमनि भे प्रहलादू॥
ध्रुव सगलानि जपेव हरि नामू। पायेउ अचल अनूपम ठामू॥
सुमिरि पवन सुत पावन नामू। अपने बस करि राखेउ रामू॥
जपत अजामिल गज गनिकाऊ। भये मुकुत हरि नाम प्रभाऊ॥
कहउं कहाँ लगि नाम बड़ाई। राम न सकहिं नाम गुन गाई॥

दोहा—राम नाम को कल्पतरु, कलि कल्यान निवास।
जो सुमिरत भये भांग ते, तुलसी तुलसीदास॥

चहुँ युग तीन काल तिहुँ लोका। भये नाम जपि जीव विसोका॥
वेद पुरान सन्त मत एहू। सकल सुकृत फल राम सनेहू॥
ध्यान प्रथम युग मख विधि दूजे। द्वापर परितोषक प्रभु पूजे॥
कलि केवल मल मूल मलीना। पाप पयोनिधि जन मन मीना॥

इतना सुन लेने पर भी प्रश्नकर्त्ता ने पुनः प्रश्न किया, "क्या दिमाग की किसी कमजोरी के कारण मन को सन्देह नज़र आते हैं, अथवा क्या निश्चल दशा में पहुँचने से पहले मन के लिए इन हालतों में गुजरना लाज़िमी है? जागृत दशा में भी शान्त मन में स्वप्न के से खेल क्यों होते हैं। अर्थात् जिन घटनाओं का प्रत्यक्ष जीवन को याददाश्त के साथ कभी सम्बन्ध नहीं रहा, उनका दिमाग में आगमन अथवा हृदय में उच्चारण क्यों होने लगता है?"

प्रश्नकर्त्ता के इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए महात्मा गाँधी ने कहा, "निश्चल दशा में पहुँचने के पहले जिसका बयान आपने किया है, वह करीब-करीब सबको होना लाजिमी है। 'करीब-करीब' कहने का मतलब है कि पूर्व जन्म में जिन्होंने साधना की है, लेकिन जो सिद्धार्थ नहीं हुए, उनको इस जन्म में यातना से गुजरना नहीं पड़ेगा। शान्त मन में स्वप्न के-से खेल होते हैं, इसका अर्थ इतना ही है कि मन बाहर से शान्त दीखता है, परंतु वास्तव में वह शान्त नहीं है। प्रत्यक्ष जीवन में जिसका सम्बन्ध नहीं दीखता, मन में उसका संचरण होता है, इसका अर्थ मेरी दृष्टि में यह है कि याददाश्त केअलावा भी बहुत सी चीजें पड़ी हैं जिनका सम्बन्ध रहता ही है।"

नाम काम तरु काल कराला। सुमिरत समन सकल जग जाला॥
राम नाम कलि अभिमत दाता। हित परलोक लोक पितु माता॥
नहि कलि कर्म न भगति बिबेकू। राम नाम अवलम्बन एकू॥
कालनेमि कलि कपट निधानू। नाम सुमति समरथ हनुमानू॥

दोहा—राम नाम नर केसरी, कनक कशिपु कलि कालु
जापक जन प्रहलाद जिमि, पालहि दलि सुरसालु॥

भाव कुभाव अनख आलसहूँ। नाम जपत मङ्गल दिसि दस हूँ॥

(रामचरित मानस बालकाण्ड)

प्रश्नकर्त्ता ने पुनः प्रश्न किया, "सेवा-कार्य के कठिन अवसरों पर भगवद्भक्ति के नित्य नियम नहीं निभ पाते, तो क्या कोई हर्ज होता है? दोनों में किसको प्रधानता दी जाय, सेवा-कार्य को अथवा माला-जप को ?"

शंका का समाधान करते हुए महात्मा गांधी ने कहा, "कठिन सेवा-कार्य हो या उससे भी कठिन अवसर हो, तो भी भगवद्भक्ति यानी रामनाम बन्द हो ही नहीं सकता। उसका बाह्यरूप प्रसंग-वशात् बदलता रहेगा। माला छूटने से राम नाम, जो हृदय में अंकित हो चुका है, थोड़े ही छूट सकता है।"

— —

४—ईश्वर का अर्थ

कोई एक सज्जन महात्मा गांधी की लिखी हुई "गीताबोध" नामक पुस्तक पढ़ रहे थे। क्रमशः पढ़ते हुए जब वे विभूतियोग नामक दसवें अध्याय को पढ़ने लगे तब उनके मन में तरह-तरह की शंकाएँ उपस्थित होने लगीं। अपनी शंकाओं का उल्लेख करते हुए उन्होंने महात्मा गांधी को इस प्रकार का एक पत्र लिखा, "आजकल आपकी लिखी 'गीताबोध' पढ़ रहा हूँ और उसे समझने की कोशिश करता हूँ। 'गीताबोध' के दसवें अध्याय को पढ़ने के बाद जो सवाल मेरे मनमें उठा है, उसी के सिलसिले में यह खत लिख रहा हूँ। उस में लिखा गया है कि श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं, "अरे, छल करने वालों का द्यूत भी मुझको समझ (द्यूतं छलयतामस्मि), इस संसार में जो भी कुछ होता है, सो मेरी इजाजत के बिना नहीं हो सकता। भला, बुरा भी तभी होता है, जब मैं होने देता हूँ (यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदह-

मर्जुन। न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम्॥)" तो क्या भगवान बुरा भी होने देता है ? और जब यह चीज़ भगवान् की इजाज़त से होती है, तो वह इसका बदला बुराई के रूप में कैसे दे सकता है ? क्या परमात्मा से संसार की उत्पत्ति इसीलिए है ? क्या संसार का समय शान्तिपूर्ण वातावरण में कभी बीत हो नहीं सकता ?"

उक्त पत्र-लेखक के पत्र को पढ़कर महात्मा गांधी ने अपने मिलने वालों से कहा, "एक पत्र-लेखक ने यह सवाल पूछा है। यह कहना कि बुराई का मालिक भी ईश्वर है, कानों को कठोर लगता है। लेकिन अगर वह अच्छाई का मालिक है, तो बुराइ का भी है हो। रावण ने अनहद ताक़त दिखाई, सो भी ईश्वर ने दिखाने दी, तभी न ? मेरे खयाल में इस सारी उलझन की जड़ ईश्वर-तत्व को न समझने में है।

ईश्वर कोई पुरुष नहीं, व्यक्ति नहीं ? उसे कोई विशेषण लगाया नहीं जा सकता। ईश्वर ख़ुद ही क़ायदा, क़ायदा बनाने वाला और क़ाज़ी है। दुनिया में हमें यह चीज़ इतनी सुसंगत रीति से कहीं देखने को नहीं मिलती। लेकिन जब कोई आदमी ऐसा करता है, तो हम उसे शाहंशाह नीरो (शैतान) के रूप में देखते हैं। मसलन्, हिन्दुस्तान का वायसराय ख़ुद क़ायदे बनाने वाला, क़ायदा और क़ाज़ी है। मनुष्य को यह स्थिति शोभा नहीं देती। लेकिन जिसे हम ईश्वर के रूप में पूजते हैं, उसके लिए तो यह न सिर्फ़ जेबा है, बल्कि असल में हक़ीक़त भी यही है। अगर हम इस चीज़ को समझ लें, तो इस ख़त में जो सवाल उठाया गया है, उसका जवाब मिल जाता है, या यों कहिये कि फ़िर वह सवाल उठ ही नहीं सकता।

दुनिया अपना समय शान्तिमय वातावरण में बिता ही नहीं सकती; यह सवाल भी खड़ा नहीं हो सकता। जब दुनिया

चाहेगी तब वातावरण भी शान्तिमय हो जायगा। यह सवाल तो उठना ही न चाहिए कि दुनिया कभी ऐसा चाहेगी या नहीं, या चाहेगी तो कब चाहेगी। ऐसे सवाल उठाना मेरे ख्याल में निठल्लेपन की निशानी है। 'आप भला, तो जग भला' के अनुसार सवाल पूछने वाले खुद हर हालत में शान्ति रख सकें, तो उन्हें समझ लेना चाहिए कि जो काम वे खुद कर सकते हैं, सो सारी दुनिया कर सकेगी। ऐसा न मानने का मतलब होगा कि वह बड़े अभिमानी है।"

५—रामधुन और ताल

एक बार महात्मा गाँधी सेवाग्राम से पूना जा रहे थे। रास्ते में एक दिन के लिए बम्बई में ठहर गये। यह घटना उस समय की है जब कि दो बातें उनके दिल में बसी हुई थीं। पहिली बात तो यह थी कि जनता के अहिंसक संगठन के लिए सामुहिक प्रार्थना की साधना की जाय और दूसरी बात यह थी कि अकाल की समस्या हल की जाय। जिस प्रकार महात्मा गांधी बंगाल, आसाम और मद्रास के दौरे में करते आये थे उसी प्रकार बम्बई में उन्होंने ताल के साथ रामधुन को प्रार्थना में दाखिल किया।

सामुहिक रामधुन और ताल का महत्व और अर्थ को समझाते हुए एक बार महात्मा गाँधी ने मद्रास में कहा था, "जहाँ तक फौज का सवाल है, दुश्मन को मार डालने के लिए हथियार चलाना सीखने में अनुशासन रहा है। मगर अहिंसा के तरीके में तो अनुशासन इस बातमें है कि ज्यादह से ज्यादह उकसाहट

के रहते भी किसी को विना मारे. विना वदला लिये, मरने की कला को अपनाया जाय और समाजकी निःस्वार्थ भाव से सेवा की जाय। अगर हिन्दुस्तान के चालीसकरोड़ लोग एक आदमी की तरह. एक आवाज से बोलें. एक साथ चलें और एक साथ काम करें, तो स्वराज्य उनकी हथेली में ही धरा है।

प्रार्थना लोगों को एक साथ रखने वाली सबसे बड़ी ताक़त है। वह इन्सानों में आपस की एकता और मेल पैदा करती है। जो आदमी प्रार्थना के जरिये ईश्वर के साथ अपनी एकता को पहचान लेता है. वह सबको अपने जैसा ही मानता है। उस हालत में न कोइ ऊंचा होगा, न नीचा, न प्रान्तीयता की संकुचित भावना रहेगी और न आन्ध्र,तामिल, कर्नाटक या मलाबार वालों के बीच भाषा के न-कुछ-से झगड़े होंगे। सवर्णों और हरिजनों, हिन्दुओं और मुसलमानों और पारसी, ईसाई या सिक्खों के बीच द्वेष बढ़ानेवाला भेद-भाव भी न रहेगा। इसी तरह समूह-समूह के बीच या एक ही समूह के सदस्यों के बीच निजी फ़ायदे के लिए या हुकूमत के लिए छीना झपटी या आपसी झगड़े भी न होंगे।

हमारे अन्दर का प्रकाश बाहर फैलना चाहिए। अगर हम ईश्वर के साथ एक-रस हुए हों, तो भीड़ कितनी ही बड़ी क्यों न हो, उसमें पूरी-पूरी शान्ति और व्यवस्था रह सकती है और कमज़ोर-से-कमजोर भी पूरी सलामती महसूस कर सकता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि ईश्वर के साक्षात्कार के फल-स्वरूप मनुष्य को दुनिया के सभी भयों से मुक्त हो जाना चाहिए। राजनीतिक गुलामी और ईश्वर की शरण दोनों बे-मेल चीजें हैं, गुलाम के लिए मोक्ष, मुक्ति या नजात है ही नहीं।"

इसी प्रकार के भावों को लेकर महात्मा गांधी सामुहिक प्रार्थना की साधना में तल्लीन हुए। बम्बई के रूंगटा भवन में

सार्वजनिक प्रार्थना के लिए रामधुन करने लगे। रूंगटा भवन की सभा में कितने ही लोगों ने ताल देने में गड़बड़ी की। यह महात्मा गांधी को पसन्द नहीं आया। उन्होंने उपस्थित जनता को मीठा उलाहना देते हुए समझाया, "बम्बई के रहने वाले संगीत के शौकीन हैं। संगीत सीखने के यहाँ कई साधन हैं। इसलिए अगर बालकों को भी ताल देना न आये, तो इसमें मैं उनकी माताओं का ही दोष समझता हूँ।

मैंने आपको अनेक बार कहा है कि अगर हमें आजाद होना है, तो हमको हँसते-हँसते फांसी चढ़ जाने की ताकत हासिल करनी पड़ेगी। मगर हर चीज के लिए उसका वक्त होता है। हम हँसने के समय हँसें और गम्भीर होने के समय गम्भीर रहें। बे वक्त की हँसी असभ्यता समझी जाती है। इसी तरह गम्भीर रहने के समय खिल-खिलाना अशिष्टता का सूचक है।

हम हिन्दू हों या मुसलमान, पारसी हों या यहूदी या सिक्ख, सब एक ही ईश्वर की सन्तान हैं। दिन के चौबीसों घंटे हमको उसका नाम लेना चाहिए। लेकिन अगर ऐसा न कर सकें, तो कम-से-कम प्रार्थना के समय तो सब इकट्ठे होकर उसका नाम लें। सामुहिक प्रार्थना सारी मानव-जाति को एक कुटुम्ब समझने की शिक्षा देने का अच्छे-से-अच्छा साधन है। सामुहिक रामधुन और ताल उसकी बाहरी निशानी है। अगर उनका रूप सिर्फ यांत्रिक न हो, बल्कि उनके जरिये हृदय की एकता की गूंज उठती हो, तो उससे जो ताकत और उसका वातावरण पैदा होता है, उसको शब्दों द्वारा नहीं, बल्कि अनुभव से ही समझा जा सकता है।

जब हम पुलिस और फौज में भरती होते हैं, तो हमको कवायद सिखाई जाती है। हथियार चलाने की शिक्षा देना फौजी अनुशासन का जरूरी हिस्सा समझा जाता है। इसका मकसद

दुश्मन को मारने की लियाकत हासिल करना होता है। फौजी कवायद में हुक्म के मुताबिक कूच करना, सामुहिक तरीके से, जरा भी आवाज किये बिना, ताल के साथ हिलना-डुलना आदि बातें शामिल होती हैं। इसी तरह अहिंसक संगठन में सामुहिक रूप से एक हृदय और एक तार होकर रामधुन और ताल लगाना जरूरी होता है। यह सलाह तभी फायदेमन्द साबित होगी, जब हम केवल बुद्धि से ही नहीं बल्कि हृदय से भी इसको मानेंगे। कोरी, सूखी बुद्धि हमको बहुत दूर नहीं ले जायगी।"

———

६—ईश्वर और अहिंसा

महात्मा गांधी को सुझाते हुए किसी सज्जन ने यह आग्रह किया, "'आत्मकथा को जहाँ से आपने छोड़ा है, वहां से आगे शुरू कर दें और अहिंसा का शास्त्र भी लिखें या किसी से लिखवायें।"

इस सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए महात्मा गांधी ने इस प्रकार कहा था, "आत्मकथा तो मैंने लिखी ही नहीं। 'सत्य के प्रयोग' नाम की एक लेख-माला लिखी है और एक किताब की शक्ल में छपी है। प्रयोगों की इस माला को पूरी किये पच्चीस साल हो गये। उसके बाद क्या किया, क्या सोचा, सो सिलसिले में दिया नहीं गया है। यह सब लिखना मुझे अच्छा लगेगा, लेकिन इसका दार-मदार फुरसत पर है। कठिन परिस्थिति में कर्तव्य समझ कर "हरिजन" शुरू किया है। उसका काम मुश्किल से कर पाता हूँ। ऐसी हालत में सत्य के जो प्रयोग हुए हैं, उनको सोच निकालने के लिए जैसी फुरसत चाहिए वह नहीं मिल रही। लेकिन अगर भगवान उन्हें लिखवाना चाहेगा, तो वह रास्ता भी सुझायेगा।

अहिंसा का शास्त्र लिखना मेरे लिए नामुमकिन है। मैं शास्त्रकार नहीं। मैं तो कर्मी—काम करने वाला—हूँ। जैसा मुझे आता है, वैसा कर्म धर्म समझ कर करता चलता हूँ। इसलिए मेरा सारा काम सेवा-भाव से प्रेरित होता है। उसमें से शास्त्र की रचना की जा सकती हो, तो भले की जाय। × × × × संसार का शास्त्र की भूख नहीं। सच्चे कर्म की है और हमेशा रहेगी। × × × इसका सार यह निकलता है कि फ़िलहाल ऐसे (अहिंसा) के शास्त्र की ज़रूरत नहीं। मेरे जीते-जी जो लिखा जायगा, वह अधूरा होगा। अगर उसका लिखा जाना मुमकिन हो, तो भले वह मेरे मरने पर लिखा जाय। और लिखा गया, तो भी मैं चेतावनी दिये देता हूँ कि उसमें पूर्ण अहिंसा के दर्शन नहीं हो सकेंगे। ईश्वर का पूरा-पूरा वर्णन अभी तक कोई नहीं कर सका। यही अहिंसा के लिए भी कहा जा सकता है। मैं खुद जिसे आज मानूँ या करूँ उसे कल मानूँगा या करूँगा, ऐसी प्रतिज्ञा नहीं कर सकता। यह काम त्रिकालदर्शी भगवान् का है। देहधारी मनुष्य तो सदा-सर्वदा अपूर्ण ही है। उसे भगवान् की उपमा चाहे दी जाय, पर वह भगवान् तो हरगिज़ नहीं। भगवान अदृश्य है, अदृष्ट है। इसलिए जिसे हम सन्त पुरुष मानते हैं, उसके वचनों को और आचरण को समझें, और जो चीज़ हमारे दिल में बस जाय, उसके अनुसार अपना आचरण बनायें। शास्त्र और क्या करेगा ?

७—कुदरती इलाज तो रामनाम ही है

प्राकृतिक चिकित्सा या कुदरती इलाज के सम्बन्ध में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए महात्मा गांधी ने इस प्रकार कहा

था, "कुदरती इलाज या उपचार का अर्थ है ऐसे उपचार या इलाज जो मनुष्य के लिए योग्य हों। मनुष्य यानी मनुष्य-मात्र। मनुष्य में मनुष्य का शरीर तो है, लेकिन उसमें मन और आत्मा भी है। इसलिए सच्चा कुदरती इलाज तो रामनाम ही है। इसी लिए रामबाण शब्द निकला है। रामनाम ही रामबाण इलाज है। मनुष्य के लिए कुदरत ने उसी को योग्य माना है। कोई भी व्याधि हो, अगर मनुष्य हृदय से रामनाम ले, तो व्याधि नष्ट होनी चाहिए। रामनाम यानी ईश्वर, खुदा, अल्लाह गाड। ईश्वर के अनेक नाम हैं। उनमें से जो जिसे ठीक लगे, उसे वह ले लेकिन उसमें हार्दिक श्रद्धा हो और श्रद्धा के साथ प्रयत्न हो। वह कैसे ?

तो जिस चीज़ का मनुष्य पुतला बना है, उसी से इलाज ढूँढ़े। पुतला पृथ्वी, पानी, आकाश, तेज और वायु का बना है। इन पांच तत्वों से जो मिल सके, सो ले। उसके साथ रामनाम चलता रहे। नतीजा यह आता है कि इतना होते हुए भी शरीर का नाश हो, तो होने दे और हर्ष-पूर्वक शरीर छोड़ दे। दुनिया में ऐसा कोई इलाज नहीं निकला है, जिससे शरीर अमर बन सके। अमर तो आत्मा ही है। उसे कोई मार नहीं सकता। उसके लिए शुद्ध शरीर पैदा करने का प्रयत्न सब करें। उसी प्रयत्न में कुदरती इलाज अपने आप मर्यादित हो जाता है। दुनिया के असंख्य लोग दूसरा कर भी नहीं सकते। और जिसे असंख्य नहीं कर सकते, उसे थोड़े क्यों करें ?

महात्मा गांधी की इस विचार-धारा से आश्चर्य-चकित होकर जब लोग तरह-तरह के प्रश्न करने लगे तब उन सब का उत्तर देने की इच्छा से उन्होंने कहा था, "ऐसे सवाल पूछे जा रहे हैं, क्या मेरे पास काम कम था ? क्या मैं बूढ़ा नहीं हो गया हूँ ? क्या कोई नये काम की मुझसे आशा कर सकते हैं ? ये सब

सवाल किये जाने लायक़ हैं। मेरे लिए भी सोचने लायक़ हैं। लेकिन मुझे भीतर से एक ही जवाब मिलता है। भीतर बैठा हुआ ईश्वर कहता है; 'दूसरे कुछ भी कहें, तुझे उससे क्या? डाक्टर दीनशा जैसा साथी मैंने तुझे दिया है। तुम दोनों एक-दूसरे को पहचानते हो। तुझे अपनी ताक़त पर एतबार है। बरसों क़ुदरती इलाज तेरा शौक़ रहा है। तेरे पास इतनी पूँजी है। उसे छिपाकर तू चोर बनेगा क्या? तेरे लिए यह अच्छा नहीं होगा। ईशोपनिषद का पहला मंत्र याद कर। जो तेरे पास है, उसे तू दे दे। तेरे पास तेरा क्या है? जो तू अपना समझता था वह तेरा था नहीं और है नहीं। सब मेरा है। यह जो तेरे पास बाकी है वह भी तू मेरे लोगों को दे दे। ऐसा करने से तेरे दूसरे काम में हर्ज नहीं होगा। शर्त यह है कि तू सब कुछ अनासक्त होकर करेगा। तूने १२५ वर्ष तक जिन्दा रहने की इच्छा की है। इच्छा पूरी हो या न हो, तुझे क्या? तुझको ख़ुद ही अपना धर्म समझना है। उसका पालन किया कर और जीवन आनन्द से चलाता जा।'

ऐसी बात मेरे कानों में गूँज रही है। इस देहात में आज मेरा तीसरा दिन है। मरीज आते रहते हैं। बढ़ते जाते हैं। वे ख़ुश रहते हैं। मैं भी उनकी सेवा करके ख़ुश रहता हूँ. यहाँ के लोग साथ दे रहे हैं। मैं जानता हूँ कि अगर लोगों के हृदय में मैं प्रवेश कर सकूँगा, तो दर्द का नाश होगा ही। इस देहात को और देहातियों को साफ़ बनाना है। ऐसा कुछ न बन पाये तो मुझे क्या? मैं तो हाकिम के हुक्म का ताबेदार हूँ।''

क़ुदरती इलाज के सम्बन्ध में जब वैद्यराज श्री गणेशशास्त्री जोशी ने महात्मा गाँधी से बातें की और चार मंत्र लिखकर दिये तब प्रसन्नता प्रकट करते हुए महात्मा गाँधी ने इस आशय का एक लेख प्रकाशित किया था, ''यह देखकर कि क़ुदरती इलाजों

में मैंने राम नाम को रोग मिटाने वाला माना है और इस सम्बन्ध में कुछ लिखा भी है, वैद्यराज श्री गणेशशास्त्री मुझसे कहते हैं कि इसके सम्बन्ध का और इससे मिलता-जुलता साहित्य आयुर्वेद में ठीक-ठीक पाया जाता है। रोग को मिटाने में क़ुदरती इलाज का अपना बड़ा स्थान है और उसमें भी रामनाम विशेष है। यह मानना चाहिए कि जिन दिनों चरक, वाग्भट वग़ैरह ने लिखा था, उन दिनों ईश्वर को रामनाम के रूप में पहचानने की रूढ़ि पड़ी नहीं थी। यह विष्णु के नाम की महिमा थी। मैंने तो बचपन से रामनाम के ज़रिये ही ईश्वर को भजा है। लेकिन मैं जानता हूँ कि ईश्वर को ॐ के नाम से भजो या संस्कृत, प्राकृत से लेकर इस देश की या दूसरे देश की किसी भी भाषा के नाम से उसको जपो, परिणाम एक ही होता है। ईश्वर को नाम की जरूरत नहीं। वह और उसका क़ायदा दोनों एक ही हैं। इसलिए ईश्वरी नियमों का पालन ही ईश्वर का जप है। अतएव केवल तात्त्विक दृष्टि से देखें, तो जो ईश्वर की नीति के साथ तदाकार हो गया है, उसे जप की ज़रूरत नहीं। अथवा जिसके लिए जप या नाम का उच्चारण साँस-उसाँस की तरह स्वाभाविक हो गया है, वह ईश्वरमय बन चुका है, यानी ईश्वर की नीति को वह सहज ही पहचान लेता है, और सहज भाव से उसका पालन करता है। जो इस तरह बरतता है; उसके लिए दूसरी दवा की ज़रूरत क्या ?

ऐसा होने पर भी जो दवाओं की दवा है, यानी राजा दवा है, उसी को हम कम-से-कम पहचानते हैं। जो पहचानते हैं, वे उसे भजते नहीं, और जो भजते हैं, वे सिर्फ़ ज़बान से भजते हैं, दिल से नहीं। इस कारण वे तोते के स्वभाव की नक़ल भर करते हैं, अपने स्वभाव का अनुसरण नहीं। इसलिए वे सब ईश्वर को "सर्व रोग हारी" के रूप में नहीं पहचानते।

पहचानें भी कैसे ? यह दवा न तो वैद्य उन्हें देते हैं, न हकीम और न डाक्टर। खुद वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों को भी इस पर आस्था नहीं। यदि वे बीमारों को घर बैठे गंगा-सी यह दवा दें, तो उनका धन्धा कैसे चले ? इसलिए उनकी दृष्टि में तो उनकी पुड़िया और शीशी ही रामबाण दवा है। इस दवा से उनका पेट भरता है और रोगी को हाथों हाथ फल भी देखने को मिलता है। "फलाँ फलाँ ने मुझको चूरन दिया और मैं अच्छा हो गया" कुछ लोग ऐसा कहने वाले निकल आते हैं और वैद्य का व्यापार चल पड़ता है।

वैद्यों और डाक्टरों के रामनाम रटने की सलाह देने से रोगी का दलिद्दर दूर नहीं होता। जब वैद्य खुद उसके चमत्कार को जानता है, तभी रोगी को भी उसके चमत्कार का पता चल सकता है। रामनाम पोथी का बैंगन नहीं, वह तो अनुभव की प्रसादी है। जिसने उसका अनुभव प्राप्त किया है, वही, यह दवा दे सकता है। दूसरा नहीं।

वैद्यराज ने मुझे चार मन्त्र लिखकर दिये हैं। उनमें चरक ऋषि वाला मंत्र सीधा और सरल है। उसका अर्थ यों है:—चराचर के स्वामी विष्णु के हजार नामों में से एक का भी जप करने से सब रोग शान्त होते हैं।

विष्णुं सहस्रमूर्धानं चराचर-पतिं विभुम।
स्तुवन्नाम सहस्रेण ज्वरान् सर्वान् व्यपोहति॥

(चरक चिकित्सा अ० ३—श्लोक ३११)

कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस प्रकार के नवीन विचारों पर अनेक विचारशील व्यक्ति आश्चर्य करने लगे और कहने लगे कि महात्मा गाँधी का इस प्रकार रामनाम के प्रति विश्वास क्यों होने लगा है ? क्या यह सत्य है कि रामनाम से बढ़कर संसार में लोक कल्याण के लिए और कोई दूसरी रामबाण दवा नहीं

है। महात्मा गाँधी तो सत्य के पुजारी, सत्य के प्रचारक और सत्य के न्हीं स्वरूप हैं। वे कभी अनर्गल विचार प्रकट नहीं करेंगे। वे चाहते हैं कि प्रत्येक तत्व को बुद्धि से समझ लेना चाहिए। "दया और निर्दयता" से सम्बन्ध रखने वाले विचारों को प्रकट करते हुये भी उन्होंने ऐसा ही कहा था अर्थात् उनके कहने का आशय यह था कि हिंसक को शक्ति को बुद्धि से जान लेना चाहिए। जब वे जीवन के हर एक विषय अथवा उसके तत्व को बुद्धि से जान लेने का उपदेश करते हैं तब रामनाम पर भी उन का वही उपदेश स्वीकार कर लेना चाहिए।

इसमें सन्देह नहीं कि वे अपने विचारों पर अटल रहते हैं और इसलिए कि वे जो कुछ कहते हैं उस पर पहले से ही पूर्ण रूप से मनन कर लेते हैं। देखिये न, कि अहिंसा की शक्ति को उन्होंने किस प्रकार दृढ़ता-पूर्ण भावना के साथ समझा है तभी तो उस पर जोर देते हुए इस प्रकार कहा है :—

"दया को निर्दयता के सामने, अहिंसा को हिंसा के सामने प्रेम को द्वेष के सामने, सत्य को झूठ के सामने ही परीक्षा हो सकती है। यह बात सही हो तो यह कहना गलत होगा कि खूनी के सामने अहिंसा का प्रयोग करना अपनी जान देना है। लेकिन इसी में अहिंसा की परीक्षा है। विशेषता इसकी यह है कि जो लाचारी से मर जाता है वह अहिंसा की परीक्षा में पास नहीं होता। जो मरते हुए भी खूनी पर क्रोध नहीं करता, और मन में उसके लिए भी ईश्वर से क्षमा माँगता है, वही अहिंसक है। ईसा मसीह के बारे में इतिहास यही कहता है। जिन्होंने उसे सूली पर चढ़ाया, मरते-मरते भी उसने उनके लिए ईश्वर से प्रार्थना की; 'हे ईश्वर! जिन्होंने मुझे सूली पर चढ़ाया है, उन्हें तू माफ करना।" ऐसी दूसरी मिसाल सब धर्मों में मिल

सकती हैं। लेकिन क्राइस्ट की यह बात सारे संसार में मशहूर है।

यह एक अलग बात है कि ऊपर बताई हुई हद तक हमारी अहिंसा न पहुँची हो। अपनी कमजोरी के कारण या इसलिए कि हमें अनुभव नहीं है, हम अहिंसा की भव्यता को नीचे न उतारें। यह ठीक नहीं होगा। हमारी समझ ही उल्टी हो, तो हम उसकी आखिरी चोटी तक नहीं पहुँच सकते। इसलिए अहिंसा की शक्ति को बुद्धि से जान लेना जरूरी है।"

जब महात्मा गाँधी की धारणा उनके अपने प्रत्येक विचार में इतनी दृढ़ है, तो क्या रामनाम के सम्बन्ध में दृढ़ न होगी? अवश्य होगी। अतएव उन्हीं से पत्र व्यवहार कर शंकाओं का समाधान कर लेना चाहिए। ऐसा विचार निश्चय कर लेने के बाद नौजवानों के एक अध्यापक ने महात्मा गाँधी के पास इस आशय का एक पत्र लिखा—

"आप जो भी कुछ लिखते हैं, मैं बड़े चाव से उसका हर एक लफ्ज पढ़ता हूँ। 'हरिजन' का नया अंक मिलने पर जब तक उसे पूरा न पढ़ लूँ, मैं रुक नहीं सकता। नतीजा इसका यह होता है कि मेरे अन्दर एक अजीब खुशी पैदा हो जाती है, जो चाहती है कि मैं जिसकी पूजा करूँ वह मेरे तौर पर पूर्ण हो। कोई भी ऐसी चीज जिस पर विश्वास न जमे, मुझे बेचैन कर देती है। हाल ही में आपने लिखा है कि क़ुदरती उपचार में रामनाम शर्तिया इलाज है। यह पढ़ कर तो मैं बिलकुल भ्रम में पड़ गया हूँ। आज के नौजवान अपनी सहनशीलता की वजह से आपकी बहुत-सी बातों का विरोध करना पसंद नहीं करते। वे सोचते हैं: "गाँधी जी ने हमको इतनी सारी चीजें दिखाई हैं, हमें इतना ऊँचा उठाया है जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते थे, इससे भी बढ़कर उन्होंने हमें स्वराज्य के नजदीक पहुँचा दिया

है। इसलिए रामनाम की उनकी इस झक को हमें बरदाश्त कर लेना चाहिए।

"दूसरी चीजों के साथ आपने कहा है, "कोई भी व्यधि हो, अगर मनुष्य हृदय से रामनाम लें, तो व्याधि नष्ट होनी चाहिए।"

'सो जिस चीज का मनुष्य पुतला बना है, उसी से इलाज ढूँढ़े। पुतला पृथ्वी, पानी, आकाश तेज और वायु का बना है। इन पाँचों तत्वों से जो मिल सके सो ले।'

'.... और मेरा दावा है कि शारीरिक रोगों को दूर करने के लिए भी रामनाम सबसे बढ़िया इलाज है।'

'पहले पहल जब कुदरती उपचार में आपने इस चीज को दाखिल किया, तो मैंने समझा कि आप श्रद्धा के आधार पर चलने वाले मानसिक उपचार (साइको-थेरेपी)* अथवा क्रिश्चियन-साइन्स† को ही दूसरे लफ़्जों में रख रहे हैं। उपचार की हर एक प्रणाली में इनका अपना स्थान होता है। ऊपर के अपने पहले उद्धरण की मैंने इसी मानी में व्याख्या की। ऊपर दिये हुए वाक्य को समझना कठिन है। आख़िरकार इन पांच महाभूतों के बिना, इनका जिक्र करते हुए आप कहते हैं कि सिर्फ़ वही उपचार के साधन होने चाहिए, दवाइयों का बनाना भी तो नामुमकिन है।

---

* साइको-थेरेपी— (मानसिक विचार) मन के विश्लेषण और इच्छाशक्ति की सहायता से कुछ शारीरिक और मानसिक बीमारियों को जड़ से मिटाने का शास्त्र।

† क्रिश्चियन सायन्स—श्रद्धा द्वारा की जाने वाली एक चिकित्सा का नाम। ईशु के स्पर्श से श्रद्धालु लोग चंगे हो जाते थे। नये करार में इसका जिक्र मिलता है। इसी पर 'फेथ हीलिङ्ग' रचा गया है। ख्याल यह है कि श्रद्धा से बीमारी दूर हो सकती है।

अगर आप श्रद्धा पर जोर देते हैं, तो मेरा कोई झगड़ा नहीं। रोगी के लिए जरूरी है कि वह अच्छा होने के लिए श्रद्धा भी रक्खे। लेकिन यह मान लेना मुश्किल है कि सिर्फ श्रद्धा से हमारे शारीरिक रोग भी दूर हो जायँगे। दो साल पहले मेरी छोटी लड़की को 'इन्फेएटाइल पैरेलिसिस' हो गया था। अगर आज के नये तरीकों से उसका इलाज न किया जाता, तो बेचारी हमेशा के लिए पंगु हो जाती। आप मानेंगे कि एक ढाई साल के बच्चे को 'इन्फेएटाइल पैरेलिसिस' से मुक्त होने के लिए राम-नाम का जप बताकर हम उसकी मदद नहीं कर सकते और न तो एक माता को अपने बच्चे के लिए अकेले एक रामनाम का ही जप करने को आप राजी कर सकते हैं।

"२४ मार्च (सन् १९४६) के अंक में आपने चरक का जो प्रमाण दिया है, उससे मुझे कोई प्रोत्साहन नहीं मिलता; क्योंकि आप ही ने मुझे सिखाया है कि कोई चीज कितनी ही पुरानी या प्रामाणिक क्यों न हो, अगर दिल को न जँचे, तो उसे नहीं मानना चाहिए।"

इस पत्र के आशय को समझ कर महात्मा गांधी ने अपने विचारों को इन शब्दों में प्रकट किया :—

"नौ जवानों के एक अध्यापक इस तरह लिखते हैं। विद्यार्थी-संसार का प्रिय बनने के लिए मैं उत्सुक तो हूँ, लेकिन मेरी उत्सुकता की अपनी मर्यादा है। एक बात तो यह है कि मुझे बाक़ी दुनिया के साथ, जो दर असल बहुत बड़ी है; उन्हें भी खुश करना चाहिए। लेकिन एक लोक-सेवक को कभी भी किसी एक व्यक्ति या वर्ग के ऐबों का पोषण करके अपने को गिराना नहीं चाहिए।

जिन लोगों की तरफ़ से ये प्रश्नकर्त्ता लिख रहे हैं, अगर वे सचमुच यह सोचते हैं कि मैंने कोई ऐसा काम किया है, जिसकी

वजह से हिन्दुस्तान अनुमान से कहीं ज्यादा ऊँचाई पर पहुँच गया है, तो जिसे वे मेरी भक कहते हैं, उसे सहन कर लेना ही काफी नहीं, वल्कि उन्हें उससे थोड़ा और आगे बढ़ना चाहिए। सहन कर लेने से हीं उनका या मेरा कोई फायदा नहीं होगा। इससे उनमें सुस्ती और मुझमें झूठा आत्म-विश्वास आसानी से बढ़ सकता है। किसी भी 'भक' को नामंजूर करने से पहले उस पर अच्छी तरह उन्हें सोच लेना चाहिए। भक्की आदमी हमेशा घृणा के लायक नहीं होते। अपनी भक के कारण ही एक जमाने में लोगों को फांसी के तख्ते पर चढ़ना पड़ा है।

रामनाम में फेथ-हीलिंग और क्रिश्चियन-सायन्स के गुण होते हुए भी वह उनसे बिलकुल अलग है। रामनाम लेना तो उस सचाई का, जिसके लिए वह लिया जाता है, एक नमूना मात्र है। जिस वक्त कोई आदमी बुद्धि-पूर्वक अपने अन्दर ईश्वर का दर्शन करता है, उसी वक्त वह अपनी शारीरिक, मानसिक और नैतिक सब व्याधियों से छूट जाता है। यह कह कर कि हमें प्रत्यक्ष जीवन में कोई ऐसा आदमी नहीं मिलता, हम इस बयान की सचाई को झूठा नहीं ठहरा सकते। हाँ, जिन लोगों को ईश्वर विश्वास नहीं, उनके लिए बेशक मेरी दलील बेकार है।

क्रिश्चियन साइन्टिस्ट, फेथ-हीलिंग और साइको-थेरेपिस्ट अगर चाहें तो रामनाम में छिपी सचाई की गवाही दे सकते हैं। मैं दलील देकर पाठकों को ज्यादा नहीं बता सकता। जिसने कभी चीनी खाई नहीं, उसे कैसे समझायें कि चीनी मीठी होती है? उसे तो चीनी चखने के लिए ही कह सकते हैं।

इस पुण्य नाम का हृदय से जप करने के लिए जो जरूरी शर्तें हैं, उन्हें मैं यहाँ नहीं दोहराऊँगा।

चरक का प्रमाण उन्हीं लोगों के लिए फायदेमन्द है, जो रामनाम में श्रद्धा और विश्वास रखते हैं। दूसरे लोगों को हक है

कि वे उस पर विचार न करें।

बच्चे गैर जिम्मेदार होते हैं। रामनाम उनके लिए बेशक नहीं हैं। वे तो मां-बाप की दया पर जीने वाले बेबस जीव हैं। इससे हमें पता चलता है कि मां-बाप की बच्चों के और समाज के प्रति कितनी भारी जिम्मेदारी है। मैं उन माँ-बापों को जानता हूँ जिन्होंने अपने बच्चों के रोगों के बारे में लापरवाही की है और यहाँ तक समझ लिया है कि उनके रामनाम लेने से ही वे अच्छे हो जायँगे।

आखिर में सब दवाइयां पंच महाभूतों से बनी हैं, यह दलील देना विचारों की अराजकता जाहिर करता है। मैंने सिर्फ इसलिए उसकी तरफ इशारा किया है कि वह दूर हो जाय।"

८—मूर्ति-पूजा का बेढंगा रूप

किसी एक व्यक्ति ने, जिसे महात्मा गांधी के प्रति अटूट श्रद्धा थी, महात्मा गांधी के नाम का एक मंदिर बनवाया और उसमें महात्मा गांधी की मूर्ति को स्थापित करके उसे राम और कृष्ण की मूर्तियों के समान पूजने लगा। धीरे-धीरे यह समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ। किसी सज्जन ने उस पत्र की कतरन महात्मा गांधी के पास भेज दी। उस कतरन के समाचार को पढ़ कर महात्मा गांधी ने इस प्रकार अपने विचार प्रकट किये—

"एक भाई ने मुझे अखबार की एक कतरन भेजी है। उसमें खबर है कि मेरे नाम का एक मंदिर बनवाया गया है और उसमें मेरी मूर्ति की पूजा की जाती है।

इसे मैं मूर्ति-पूजा का बेढंगा रूप मानता हूँ। जिसने यह मंदिर बनवाया, उसने अपने पैसे बर्बाद किये, गाँव के भोले लोगों

को गलत रास्ता दिखाया और मेरे जीवन का गलत खाका खींच कर मेरा अपमान किया। इससे पूजा का अर्थ सिद्ध नहीं होता, उलटे, अनर्थ होता है। अपने गुजारे के लिए या स्वराज्य के लिए यज्ञ के रूप में कातना ही मेरे वचार में सच्ची चरखा पूजा है।"

तोते की तरह गीता का पारायण करने के बदले उसके उपदेश के अनुसार आचरण करना सच्ची गीता-पूजा है। गीता-पाठ भी उसी हद तक मुनासिब माना जायगा, जिस हद तक वह गीता के उपदेश के अनुसार आचरण करने में मददगार हो। मनुष्य की कमजोरी का नहीं, बल्कि उसके गुणों का अनुकरण ही उसकी सच्ची पूजा है।

जिन्दा आदमी की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करने से हम हिन्दू धर्म को पतन की आखिरी सीढ़ी पर पहुँचा देते हैं। मौत से पहले किसी आदमी को पूरी तरह अच्छा नहीं कहा जा सकता और मौत के बाद भी जिसे उस आदमी में आरोपित गुणों में विश्वास होगा, वही उसे अच्छा कहेगा। सच तो यह है कि अकेला एक ईश्वर ही मनुष्य के हृदय को जानता है। इसलिए किसी जिन्दा या मरे हुए आदमी को पजने के बदले जो पूर्ण है और सत्य स्वरूप है, उस ईश्वर को पूजने और उसी का भजन करने में सुरक्षितता है।

यहाँ यह सवाल जरूर उठ सकता है कि फोटो रखना भी पूजा का ही एक प्रकार है या नहीं? इसके बारे में मैं पहले लिख चुका हूँ। फोटो रखने का रिवाज भी खर्चीला तो है, मगर उसे निर्दोष समझ कर मैं अब तक उसको बर्दाश्त करता आया हूँ। अगर उसकी वजह से मैं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीति से मूर्ति-पूजा को तनिक भी बढ़ावा देता होऊँ, तो उसे भी हास्यास्पद और हानि-कारक समझ कर छोड़ दूँगा।

मंदिर के मालिक मूर्ति को हटाकर उस मकान में खादी का

केन्द्र खोलें. तो वह सब तरह इष्ट होगा और फिलहाल जो पाप वह कर रहे हैं, उससे बच जायेंगे। उस मकान में ग़रीब लोग मजदूरी के लिए धुनें और कातें। दूसरे यज्ञ के लिए धुनें और कातें। सब खादी पहनने लगें। यही गीता का कर्म्योग है। जीवन में इसका आचरण करने से गीता की और मेरी सच्ची पूजा की जा सकेगी। दूसरी पूजा हानि-कारक है और इसलिए छोड़ने लायक है।"

६—ईश्वर की उपासना और सत्याग्रह

एक बार बम्बई के शिवाजी पार्क में जिस समय महात्मा गांधी ने प्रवेश किया, देखते हैं कि लाखों की तादाद में जनता उपस्थित है। और वह भी केवल प्रार्थना में सम्मिलित होने के लिए। ऐसी श्रद्धालु जनता के सामने सामूहिक प्रार्थना में राम-धुन के महत्व का वर्णन करते हुए उन्होंने कहा था—

सामुहिक प्रार्थना में रामधुन का गाया जाना प्रार्थना का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। लाखों करोड़ों के लिए गीता के श्लोकों, कुरान की आयतों और जेन्दअवस्ता के मंत्रों को समझना और उनका सही-सही पाठ करना कठिन हो सकता है, लेकिन राम नाम या भगवान के नाम को गाने में तो हर कोई शामिल हो सकता है। रामनाम जितना कारगर है उतना सादा भी। शर्त यह है कि वह दिल से निकलना चाहिए। इस सादगी में ही महानता और विश्वव्यापकता का रहस्य समाया हुआ है। जिस काम को करोड़ों लोग एक साथ कर सकते हैं, उसमें एक बेजोड़ ताकत पैदा हो जाती है।"

समूह रूप से रामधुन गाने की कोई तालीम आपको पहले से मिली नहीं थी, फिर भी आज आपने जिस कामयावी के साथ उसे गाकर दिखाया, उसके लिए मैं आपको मुवारकवाद देता हूँ। लेकिन उसमें और भी सुधार किये जा सकते हैं। आपको अपने घरों में भी इसका अभ्यास करना चाहिए। मैं आपसे कहूँगा कि जव रामधुन स्वर और ताल के साथ गाई जाती है, तो स्वर, ताल और विचार तीनों का मेल मिठास और शक्ति का एक ऐसा अमिट वातावरण पैदा करता है, जिसका शब्दों द्वारा वर्णन नहीं किया जा सकता।

दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह की लड़ाई शुरू करने के कुछ ही पहिले मैंने सामुहिक प्रार्थना का यह रिवाज़ शुरू किया। उन दिनों अफ्रीका के हिन्दुस्तानियों के सामने एक वड़ा संकट मुँह बाये खड़ा था। इन्सान के किये जितना हो सकता है, सो सव हमने किया। न्याय पाने के सभी तरीक़ों को आज़माया गया—अख़बारों और सभाओं के ज़रिये आन्दोलन किया गया, अर्ज़ियाँ भेजी गईं; डेपुटेशन ले जाये गये—लेकिन कोई नतीजा न निकला। उन दिनों दक्षिण अफ्रीका में रहने वाले हिन्दुस्तानियों में ज्यादातर वे मुट्ठी भर गिरमिटिया मज़दूर थे, जो पढ़ना-लिखना भी नहीं जानते थे और उनके साथ कुछ थोड़े-से 'स्वतंत्र व्यापारी और फेरीवाले वग़ैरह लोग थे। वहाँ के हब्सियों और गोरों की वहुत वड़ी तादाद के बीच ये हिन्तुस्तानी क्या करते? गोरे सव तरह के हथियारों से लैस थे। ज़ाहिर था कि अगर हिन्दुस्तानियों को अपनी स्थिति सँभालनी थी, तो उनको अपने लिए ऐसा कोई हथियार तैयार कर लेना ज़रूरी था, जो वहाँ के गोरे वाशिन्दों की ताक़त से बिलकुल अलग ढंग का होते हुए भी उससे वेहद वढ़ा-चढ़ा हो। यही वह मौक़ा था, जव मैंने फिनिक्स और टाल्सटाय आश्रमों में सामुहिक प्रार्थना को सत्याग्रह या

आत्मबल के हथियार के उपयोग की तालीम के रूप में शुरू किया था।

सत्याग्रह की जड़ में प्रार्थना है। पाशवी शक्ति के अत्याचारों से बचने के लिए सत्याग्रही ईश्वर पर भरोसा रखता है। ऐसी हालत में आपको हमेशा इस बात का डर क्यों रहना चाहिए कि अंग्रेज या दूसरा कोई आपको धोखा देगा—ठग लेगा ? अगर कोई आपको ठगता है तो नुक़सान उसी का है। सत्याग्रह की लड़ाई तो आत्मवीरों के लिए है, डरपोकों या अश्रद्धालुओं के लिए नहीं। सत्याग्रह तो हमको जीने और मरने की कला सिखाता है मनुष्यों की दुनिया में लोगों का पैदा होना और मरना तो लाज़मी है। मनुष्य में पशु से अलग करनेवाली उसकी वह सजग कोशिश है, जिसके ज़रिये वह अपनी आत्मा का साक्षात्कार किया चाहता है। गीता के दूसरे अध्याय के अठारह श्लोकों में, जो प्रार्थना के समय पढ़े जाते हैं, जीवन की कला का सार समाया हुआ है। भगवान् कृष्ण ने अर्जुन के सवाल का जवाब देते हुए इन श्लोकों में स्थितप्रज्ञ* का यानी सत्याग्रही का वर्णन किया है।

---

*प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥
दुःखेष्वनुद्विग्नमनः सुखेषु विगत स्पृहः ।
वीतराग भय क्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥
यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम् ।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥
यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥
विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः ।

जीवन की कला के परिपाक रूप में मरण की कला भी आती है। मनुष्यमात्र को मरना तो है ही। आदमी बिजली के गिरने

रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ॥
यततोह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥
तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥
ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते।
सङ्गात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥
क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृति विभ्रमः।
स्मृति भ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥
रागद्वेष वियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन्।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥
प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योप जायते।
प्रसन्न चेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥
नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥
इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनु विधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ॥
तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः।
इंद्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।
या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥
आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥
विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः

से मर सकता है, दिल की धड़कन के रुक जाने से मर सकता है, या साँस रुँधने से भी मर सकता है। लेकिन कोई सत्याग्रही अपने लिए ऐसी मौत की न तो कामना करता है, न प्रार्थना। सत्याग्रही के लिए मरने की ख़ूबी—कला—इस बात में है कि वह अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए हँसते-हँसते मौत का सामना करे। ज़ाहिर है कि बम्बई के लोगों ने अभी इस कला को सीखा नहीं है। अपने दुश्मन को न मारने या उसको चोट न पहुँचाने की चाह रखना ही काफ़ी नहीं है। अगर आपका दुश्मन मारा जा रहा है, और आप चुपचाप, तटस्थ भाव से खड़े इस चीज को देख रहे हैं, तो कहना होगा कि आप सत्याग्रही नहीं हैं। आपका धर्म है कि आप अपनी जान देकर भी उसे बचायें। अगर हिन्दुस्तान के हजारों लोग इस कला को सीख लें, तो हिन्दुस्तान का सारा नक़शा ही बदल जाय और फिर किसी को घृणा के साथ अंगुली उठाकर यह कहने की हिम्मत न पड़े कि हिन्दुस्तान की अहिंसा उसकी कमज़ोरी को ढकने या छिपाने का साधन है। उस हालत में हम लूट-पाट और ख़ून-ख़राबी वग़ैरह के लिये गुण्डों को दोष देने की

निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति ।

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति ।

स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥

गीता के दूसरे अध्याय के अठारह श्लोक यही हैं जिनका कि उल्लेख ऊपर किया गया है। इन श्लोकों का अर्थ वास्तव में क्या है इसे तो मननशील पाठक ही समझ सकेंगे किन्तु साधारण जनता के बोध को जगाने के लिए हम केवल साधारण शाब्दिक अर्थ दे रहे हैं क्योंकि भावार्थ तो अपने-अपने स्वतंत्र भावों के अनुसार ही सन्तोष जनक हो सकेगा। अस्तु—

क़ोशिश नहीं करेंगे। बल्कि हम गुण्डों पर भी क़ाबू पा लेंगे और उनको भले आदमी बना देंगे।

हम अपने इतिहास के बहुत नाज़ुक समय में गुज़र रहे हैं। चारों तरफ़ हम ख़तरों से घिरे हैं। लेकिन अगर हम सत्याग्रह की शक्ति को, जिससे बढ़कर कोई शक्ति दुनिया में नहीं, ठीक से समझ लें, तो हम अपने संकट को भी सुअवसर में बदल डालें।'

"हे केशव! समाधि में स्थित स्थिर-बुद्धिवाले पुरुष का क्या लक्षण है? और स्थिर-बुद्धिवाला पुरुष किस प्रकार बोलता है? किस प्रकार बैठता है? और किस प्रकार चलता है?" अर्जुन द्वारा किये गये इन प्रश्नों का उतर देते हुए श्रीकृष्ण ने उपर्युक्त अठारह श्लोकों में इस प्रकार कहा—

"हे पार्थ! (परमानन्द रूप) आत्मा में स्वयं तुष्ट रह कर जिस समय (योगी) मनोगत समस्त कामनाओं का त्याग कर देता है उस समय उसे स्थितप्रज्ञ कहा जाता है। दुःखों के प्राप्त होने पर जो उद्वेग रहित बना रहता है, सुखों की प्राप्ति के लिए जिसमें किंचिन्मात्र भी स्पृहा नहीं रह गई है और जिसके मन के राग, भय और क्रोध नष्ट हो चुके हैं, ऐसे मुनि को स्थिर बुद्धिवाला कहा जाता है। जो पुरुष सर्वत्र स्नेह-रहित हुआ, उस-उस शुभ तथा अशुभ वस्तु को प्राप्त होकर न प्रसन्न होता है और न द्वेष करता है, उसकी बुद्धि स्थिर रहती है। जिस प्रकार कछुआ अपने अङ्गों को समेट लेता है. उसी प्रकार जो पुरुष जब सब ओर से अपनी इन्द्रियों को इन्द्रियों के विषयों से समेट लेता है तब वह पुरुष स्थिर-बुद्धिवाला हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं कि इन्द्रियों के द्वारा विषयों को न ग्रहण करने वाले पुरुष के केवल विषय ही निवृत्त हो जाते हैं किन्तु राग नहीं निवृत्त होता है। परन्तु स्थिर-बुद्धि वाले पुरुष का राग भी परमात्मा को साक्षात् करके निवृत्त हो जाता है। और हे अर्जुन! (यह प्रायः देखा

६०—प्रार्थना का रहस्य और रामनाम

जब महात्मा गाँधी से, "क्या दिल में रामनाम रखना काफी नहीं ? उसे जबान से बोलने में कुछ है ?" इस प्रकार के प्रश्न किये गये थे तब उत्तर देते हुए उन्होंने कहा था, "रामनाम लेने

गया है कि) प्रयत्न करते हुए बुद्धिमान् पुरुष के भी मन को यह प्रमथन स्वभाववाली इन्द्रियाँ बलात्कार से हर लेती हैं, इसलिए मनुष्य को चाहिये कि उन सम्पूर्ण इन्द्रियों को वश में कर के समाहित चित हुआ मेरे परायण स्थित होवे, क्योंकि जिस पुरुष की इन्द्रियाँ उसके वश में होती हैं, उसकी ही बुद्धि स्थिर होती। इतना ही नहीं, यदि मन के सहित इन्द्रियों को अपने वश में कर के मेरे परायण न हो सका तो मन के द्वारा विषयों का चिन्तन करनेवाले पुरुष की उन विषयों में आसक्ति हो जाती है और आसक्ति से उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है और कामना में विघ्न पड़ने से क्रोध उत्पन्न होता है और क्रोध से अविवेक अर्थात् मूढ़ भाव उत्पन्न होता है और अविवेक से स्मरण शक्ति भ्रमित हो जाती है और स्मृति के भ्रमित हो जाने से बुद्धि अर्थात् ज्ञान-शक्ति का नाश हो जाता है और बुद्धि के नाश होने से यह पुरुष अपने श्रेय साधन से गिर जाता है।

परन्तु स्वाधीन अन्तःकरण वाला पुरुष राग-द्वेष से रहित अपने वश में की हुई इन्द्रियों द्वारा विषयों को भोगता हुआ अन्तःकरण की प्रसन्नता अर्थात् स्वच्छता को प्राप्त होता है और उस प्रसन्नता के होने पर ऐसे पुरुष के सम्पूर्ण दुःखों का अभाव हो जाता है और ऐसे प्रसन्न चित्तवाले पुरुष की बुद्धि शीघ्र ही अच्छे प्रकार स्थिर हो जाती है।

में खूबी है, ऐसा मैं मानता हूँ। जो आदमी जानता है कि राम सचमुच उसके दिल में है, उसे रामनाम का उच्चारण करने की

और हे अर्जुन! साधना रहित पुरुष के अन्तःकरण में श्रेष्ठ बुद्धि नहीं होती है और उस अयुक्त के अन्तःकरण में आस्तिक भाव भी नहीं होता है और बिना आस्तिक भाव वाले पुरुष को शान्ति भी नहीं होती, फिर शान्ति रहित पुरुष को सुख कैसे प्राप्त हो सकता है? क्योंकि जिस प्रकार जल में वायु नाव को हर लेता है उसी प्रकार विषयों में विचरती हुई इन्द्रियों के बीच में जिस इन्द्रिय के साथ मन रहता है, वह एक ही इन्द्रिय इस अयुक्त पुरुष की बुद्धि को हरण कर लेती है। इसीलिए हे महाबाहो! जिस पुरुष की इन्द्रियाँ सब प्रकार इंद्रियों के विषयों से वश में की हुई होती हैं, उसकी बुद्धि स्थिर होती है।

हे अर्जुन! सम्पूर्ण भूत प्राणियों के लिए जो रात्रि है उस नित्य शुद्ध बोध स्वरुप परमानन्द में भगवत् को प्राप्त हुआ योगी पुरुष जागता है और जिस नाशवान् क्षण भंगुर सांसारिक सुख में सब भूत प्राणी जागते हैं, तत्त्व को जानने वाले मुनि के लिए वह रात्रि है। और जैसे सभी ओर से परिपूर्ण अचल प्रतिष्ठा वाले समुद्र के प्रति भिन्न-भिन्न नदियों के जल, उसको चलायमान न करते हुए ही समा जाते हैं, वैसे ही जिस स्थिर-बुद्धि पुरुष के प्रति सम्पूर्ण भोग किसी प्रकार का विकार उत्पन्न किये बिना ही समा जाते हैं; वह पुरुष परमशान्ति को प्राप्त होता है, न कि भोगों को चाहने वाला।

क्योंकि जो पुरुष सम्पूर्ण कामनाओं को त्याग कर, ममता-रहित, अहंकार-रहित और स्पृहा रहित हुआ बर्तता है, वह शान्ति को प्राप्त होता है। हे अर्जुन! यह ब्रह्म को प्राप्त हुए पुरुष की स्थिति है, इसको प्राप्त होकर वह मोहित नहीं होता है और अन्तकाल में भी इस निष्ठा में स्थित होकर ब्रह्मानन्द को प्राप्त हो जाता है।"

जरूरत नहीं, यह मैं कबूल कर सकता हूँ। लेकिन ऐसे आदमी को मैं नहीं जानता। इससे उलटा मुझे जाती अनुभव है कि रामनाम के रटने में कुछ चमत्कार है। वह क्यों और कैसे, यह जानने की-जरूरत नहीं।"

इसी प्रकार प्रार्थना का रहस्य बतलाते हुए भी उन्होंने कहा था, "अब इसमें कोई शक नहीं मालूम होता कि कुछ ही समय में हिन्दुस्तान राजनीतिक आजादी पा जायगा। इस आजादी में हम प्रार्थना के साथ प्रवेश करें। प्रार्थना फुरसत के वक्त बुढ़िया के दिल-बहलाव की चीज नहीं। अगर उसके रहस्य को ठीक-ठीक समझ लिया जाय और उसका ठीक-ठीक इस्तेमाल किया जाय, तो वह हमको काम करने की अजीब ताकत देती है।

तो अब हम प्रार्थना करें और यह जान लें कि अहिंसा का रहस्य क्या है और उसके जरिये हासिल की गई आजादी को कैसे टिकाया जा सकता है। अगर हमारी अहिंसा कमजोरों की है, तो यह समझ लेना चाहिए कि ऐसी अहिंसा से आजादी टिकाई नहीं जा सकेगी। इसी से यह भी साबित होता है कि एक लम्बे अरसे तक हम हथियारों के जरिये अपनी हिफाजत करने की ताकत नहीं पा सकेंगे। हमारे पास न हथियार हैं और न उनकी जानकारी है। हममें जरूरी अनुशासन भी नहीं। नतीजा यह होगा कि हमको दूसरे राष्ट्र की मदद पर मदार रखना पड़ेगा और सो भी बराबरी के नाते नहीं, बल्कि शिष्य और गुरू के नाते। इस खयाल से कि, 'हलके दर्जे के' शब्द कानों को कठोर लगेगा, उसका इस्तेमाल नहीं किया है।

इसलिए साफ तौर पर यह महसूस किया जाना चाहिए कि आजादी हासिल करने की तरह ही उसे कायम रखने के लिए भी अहिंसा का सहारा किये बिना चारा नहीं। इसका मतलब यह हुआ कि जो अपने को हमारे दुश्मन समझते हैं, उन सबके लिए

हमें अहिंसा का ही इस्तेमाल करना है। जिन्होंने करीब ३० साल तक अहिंसा की तालीम पाई है उनके लिए यह चीज बहुत ज्यादा न होनी चाहिए। अहिंसा का मंत्र है—'अपनी इज्जत और आजादी के लिए मरो।' यह नहीं कि 'जरूरत पड़ने पर मारो और मारते हुए मरो।' बहादुर सिपाही क्या करता है? वह मौका पड़ने पर ही मारता है और ऐसा करते हुए अपनी जान जोखिम में डालना आसान क्यों मालूम होता है! और क्या वजह है कि बिना मारे मरना दिव्य माना जाय? यह सोचना कि मारने के धन्धे को सीखे बिना मरा नहीं जा सकता, निरा भ्रम है। हम इस भ्रम में न फँसें। बार-बार भ्रम की ही रट लगाये रहने से हम उसमें फँस जाते हैं और उसी को सच समझने लग जाते हैं।

लेकिन टीका करनेवाले या निन्दा करनेवाले यह पूछेंगे कि जब यह चीज इतनी आसान है, तो प्रार्थना को किसलिए बीच में डालते हो? इसका जवाब यही है कि जीवन की अलग-अलग हालतों में और आखिरी हालत में, राष्ट्र की आजादी और इज्जत की रक्षा के लिए अपने आपको मिटा देने की जो भव्य और वीरता-पूर्ण कला हमें सीखनी है, उसके लिए प्रार्थना पहला और आखिरी सबक है।

प्रार्थना के लिए ईश्वर में सजीव श्रद्धा की जरूरत है। बिना ऐसी श्रद्धा के सत्याग्रह के सफल होने की कल्पना नहीं की जा सकती। भगवान् को हम किसी भी नाम से क्यों न पहचाने, उसका रहस्य यह है कि वह और उसका कानून एक ही है।"

जब महात्मा गांधी से, "ईश्वर आदमी के खयाल का पुतला ही है। ईश्वर ने आदमी को नहीं बनाया, आदमी ने ईश्वर को

बनाया है। क्या यह ठीक नहीं ?" इस प्रकार का प्रश्न किया गया था, तब उन्होंने ऐसा कहा था, "इसमें सचाई का सिर्फ आभास ही है। 'बनाना' और 'ईश्वर' इन दो शब्दों के खेल से यह गुमान पैदा किया गया है।

ईश्वर खुद कानून है और कानून बनानेवाला भी। इसलिए उसको बनाने का सवाल ही नहीं उठता, और फिर एक नाचीज इन्सान के हाथों ! आदमी बन्द बाँध सकता है, लेकिन नदी नहीं पैदा कर सकता। कुरसी बना सकता है मगर लकड़ी नहीं। वह ईश्वर की अनेक कल्पनाएँ कर सकता है। लेकिन जो लकड़ी, नदी वगैरह नहीं बना सकता, वह ईश्वर को कैसे बनावेगा ? इसलिए शुद्ध सत्य तो यह है कि ईश्वर ने आदमी को बनाया है। आदमी ने ईश्वर को पैदा किया, यह तो सचाई का आभास ही है। या तो, जो कहना चाहे, वह कह सकता है कि ईश्वर न तो कुछ करता है और न कुछ कराता है। दोनों बातें ईश्वर को लागू होती हैं।"

---

११ स्वर्ग का राज्य या राम राज्य

अपने मित्रों द्वारा किये गये 'आजादी क्या है' इस प्रश्न का उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने कहा था—"बात के दोहराये जाने का डर होते हुए भी मुझे कहना चाहिए कि मैं तो राम-राज्य का यानी दुनिया में ईश्वर के राज्य का ख्वाब देखता हूँ—वही आजादी है। स्वर्ग में यह राज्य कैसा होगा, सो मैं नहीं जानता। बहुत दूर की चीज जानने की मुझे इच्छा भी नहीं।

अगर वर्तमान दिल को अच्छा लगता हो तो भविष्य उससे

बहुत अलग नहीं हो सकता इसलिए राजनीतिक, आर्थिक और नैतिक यानी सियासी, माली और इखलाक़ी, तीनों तरह की आजादी ही सच्ची आज़ादी है। "राजनीतिक" आज़ादी का मतलब ही यह है कि मुल्क पर ब्रिटिश फौजों की किसी भी शक्ल में कोई हुकूमत न रहे।

'आर्थिक या माली आजादी' का मतलब ब्रिटिश पूँजी-पतियों और ब्रिटिश पूँजी के साथ ही उनके प्रतिरूप हिन्दुस्तानी पूँजीपतियों और उनकी पूँजी से कतई छुटकारा पाना है। दूसरे लफ़्ज़ों में छोटे-से-छोटे आदमी को भी यह महसूस करना है कि वह बड़े-से-बड़े आदमी के बराबर है। यह तभी हो सकता है जब पूँजीपति अपने हुनर और अपनी पूँजी में छोटे-से-छोटे और गरीब-से-गरीब को अपना हिस्सेदार बना लें! "नैतिक आजादी" का मतलब मुल्क के लिए रक्खी हुई हथियारबन्द फौजों से छुटकारा पाना है।

राम-राज्य की मेरी कल्पना में ब्रिटिश फौजी हुकूमत की जगह राष्ट्रीय फौजी हुकूमत को बैठा देने की कोई गुञ्जायश नहीं। जिस मुल्क में फौजी हुकूमत होती है, फिर वह फौज मुल्क की अपनी ही क्यों न हो, वह मुल्क नैतिक दृष्टि से कभी आजाद नहीं हो सकता, और इसलिए उसके सब से कमजोर कहे जाने वाले बाशिन्दे कभी पूरी तरह से नैतिक उन्नति नहीं कर सकते।"

इसी तरह दिल्ली की प्रार्थना सभाओं में भी उन्होंने कहा था, "अगर करोड़ों की अहिंसक ताकत से स्वाराज्य हासिल किया जाने को है, तो उन्हें किसी हद तक अपने अन्दर स्थितप्रज्ञ के गुणों का विकास करना होगा।"

यह आदर्श अकेले ज्ञानियों के लिए नहीं है। यह सब के लिए है– मामूली घर-गृहस्थी वालों के लिए भी। महाभारत में

खुद भगवान श्री कृष्ण को रथ हाँकने वाला सारथी बताया गया है, और उनके शिष्य अर्जुन को, जिसे गीता का उपदेश दिया गया था, अपने विचारों और रहन सहन में साधारण जन सा चित्रित किया गया है।

तो फिर स्थितप्रज्ञ की विशेषताएँ क्या हैं? स्थितप्रज्ञ वह है जो अपनी इन्द्रियों को इन्द्रियार्थों से हटाकर उन्हें आत्मा की ढाल के नीचे छिपा लेता है, जिस तरह कछुआ अपने अंगों को ढाल के नीचे छिपाता है।

जिस आदमी की बुद्धि स्थिर नहीं होती, उसके लिए डर रहता है कि वह ग़ुस्से का, विकारों और बुरे विचारों का या गाली-गलौज का शिकार बन जायगा। इसके खिलाफ जिस आदमी की बुद्धि स्थिर होती है, वह स्तुति और निन्दा दोनों को समान भाव से सह लेगा। वह समझ जायगा कि गाली से गाली देने वाले की ज़बान ही गन्दी होती है, जिसको गाली दी जाती है, उसका कुछ नहीं बिगड़ता। इसलिए स्थिर बुद्धि वाला आदमी कभी क़िसी का बुरा नहीं चाहेगा। बल्कि आख़िरी दम तक अपने दुश्मन के भले के लिए भी भगवान से प्रार्थना करता रहेगा।"

इस तरह कहकर महात्मा गांधी ने उपस्थित लोगों से पूछा, "क्या इस आदर्श का पालन करना बहुत कठिन है?" और फिर ख़ुद ही जवाब दिया, "नहीं। इसके बरखिलाफ़ इसमें जो नियम बताये गये हैं वे ही इन्सान की सच्ची शान के मुताबिक हैं।

आज हमारे दिमाग़ों पर भ्रम के जाले छाये हुये हैं। अपनी नासमझी के कारण हम एक-दूसरे से झगड़ते हैं और अपने ही भाई बन्दों के खिलाफ दंगा-फ़साद करते हैं। ऐसे लोगों को न तो मुक्ति मिल सकती है और न स्वराज्य। अपने ऊपर क़ाबू रखना स्वराज्य की पहली शर्त है।

संस्कृत में होने के कारण गीता के श्लोकों को सही-सही बोलना सब के लिए मुश्किल हो सकता है। लेकिन रामधुन गाने में तो सब कोई शामिल हो सकते हैं। ताल के साथ रामधुन गाना प्रार्थना का सादे-से-सादा रूप है।"

"लेकिन ग़ैर-हिन्दू इसमें कैसे शामिल हो सकते हैं?" इस प्रश्न के उत्तर में महात्मा गाँधी ने कहा था, "जब कोई यह एतराज़ पेश करता है कि राम का नाम लेना या रामधुन गाना तो सिर्फ हिन्दुओं के लिए है, तब मुझे मन-ही-मन हँसी आती है। हाँ, ऐसी हालत में मुसलमान उसमें किस तरह शरीक हो सकते हैं? क्या मुसलमानों का भगवान हिन्दुओं, पारसियों या ईसाइयों के भगवान से जुदा है? नहीं, सर्वशक्तिमान, और सर्वव्यापी ईश्वर तो एक ही है। उसके कई नाम हैं और उसका जो नाम हमें सबसे ज्यादा प्यारा होता है उस नाम से हम उसको याद करते हैं।

मेरा राम, हमारी प्रार्थना के समय का राम, वह ऐतिहासिक राम नहीं है, जो दशरथ का पुत्र और अयोध्या का राजा था। वह तो सनातन, अजन्मा और अद्वितीय राम है। मैं उसी की पूजा करता हूँ। उसी की मदद चाहता हूँ। आपको भी यही करना चाहिए। वह सब किसी का है। इसलिए मेरी समझ में नहीं आता कि क्यों किसी मुसलमान को या दूसरे किसी को उसका नाम लेने में एतराज होना चाहिए? लेकिन यह कोई ज़रूरी नहीं कि वह रामनाम के रूप में ही भगवान को पहचाने, उसका नाम ले। वह मन-ही-मन अल्लाह या खुदा का नाम भी इस तरह जप सकता है कि जिससे उसमें बेसुरापन न आवे।"

एक दूसरे मौक़े पर प्रार्थना के समय जो भजन गाया गया था उसको समझाते हुए महात्मा गाँधी ने कहा था, "इस भजन में हमें यह यक़ीन दिलाया गया है कि भगवान जिसकी रक्षा

करता है, दुनिया कि कोई ताक़त उसको नुकसान नहीं पहुँचा सकती। आज के मौके पर इस भजन का यह सन्देश ख़ास महत्व रखता है, क्योंकि आज सारी दुनिया आपस के झगड़ों में डूबी हुई है। लड़ाई जो भी ख़त्म हो चुकी है, तो भी जिन कारणों से वह शुरू हुई थी, वे अभी तक बने हुए हैं। इसे शान्ति नहीं कहा जा सकता. यह दूसरी लड़ाई के लिए चुपचाप तैयारी करने का एक तरीक़ा है।

दिल्ली में आज क्या हो रहा है ? लोग एक-दूसरे पर कीचड़ उछालते हैं. गालियाँ देते हैं और मार-काट की धमकियों से सारी हवा ज़हरीली बन गई है। लेकिन अगर आप में ईश्वर क प्रति श्रद्धा है. तो आप इन तमाम धमकियों और गालियों से घबड़ायेंगे नहीं बल्कि यह सोचकर बेफ़िकर रहेंगे कि जब तक भगवान् का साया आपके ऊपर है, कोई आपका बाल भी बाँका नहीं कर सकता। कहावत है कि जो अन्दर है उसी की छाया बाहर भी पड़ती है। अगर आप भले हैं तो सारी दुनिया आपके साथ भली रहेगी। इसके ख़िलाफ अगर आपको किसी को बुरा समझने की ख्वाहिश हुई. तो बहुत मुमकिन है कि बुराई अन्दर ही हो।

अख़बारों में खबर छपी थी कि······ने आमतौर पर हिंदुओं के ख़िलाफ़ बहुत कुछ बुरा-भला कहा है। इस खबर को भजन के सन्देश पर घटाते हुए महात्मा गाँधी ने कहा था, "··· के दिल में मेरे लिए बहुत इज़्ज़त है। इसलिए अगर कोई मुझसे आकर कहे कि इन्होंने हिन्दुओं को गाली दी है और उन्हें भला-बुरा कहा है, तो मुझे उस पर यकीन न करना चाहिए और न उनका बुरा ही सोचना चाहिए। कल तक जो आदमी मेरे सगे भाई की तरह था, वह अचानक हिन्दुओं का दुश्मन कैसे बन सकता है ? बल्कि मैं तो यह सोचूँगा कि कुछ हिन्दुओं ने अपने बर्ताव से उनको इस क़दर हैरान किया होगा कि वे अपना तौल

खो बैठे होंगे। इसी तरह मुझको पक्का भरोसा है कि अगर वे साहब आज मुझसे आकर मिलें और मैं उनसे पूछूँ कि क्या सचमुच वे यह मानते हैं कि एक ही रात में सारे-के-सारे हिन्दू बुरे बन गये हैं, तो वे उनके अपने मुँह से कहलाई हुई बातों पर हँस देंगे और उन्हें वाहियात कहकर टाल देंगे। हमें न तो किसी का बुरा सोचना चाहिए और न यह शक रखना चाहिए कि कोई हमारा बुरा सोच रहा है। बुरी बातों को सुनने और उन पर भरोसा करने की आदत ईमान की कमी को जाहिर करती है।"

इसी प्रकार प्रार्थना-सभा में महात्मा गांधी का एक प्रवचन यह भी था' "अपने दिल को टटोलते हुए कवि (शायर) अपने आप से पूछता है, 'भले आदमी, तूने भगवान् का नाम जपना क्यों छोड़ दिया है? तूने गुस्सा नहीं छोड़ा, लालच नहीं छोड़ा; झूठ नहीं छोड़ा, लेकिन तू सच को छोड़ बैठा है। यह कितने दुःख की बात है कि तूने कौड़ी का तो इतना जतन किया और भगवान् के प्रेम रूपी लाल रतन को हाथ से जाने दिया? अरे मूरख! तू ने सब तरह का घमंड छोड़कर अपने को अकेले एक भगवान् के भरोसे क्यों नहीं छोड़ दिया?' इसका यह मतलब नहीं कि अगर आपके पास धन-दौलत है, तो आप उसे फेंक दें और बाल बच्चों को घर से बाहर निकाल दें। बात यह है कि आपको इन सब का मोह छोड़ देना चाहिए, यानी इनके लिए मन में कोई लगाव नहीं रखना चाहिए, और अपना सब कुछ ईश्वर को सौंपकर उसकी दी हुई चीज़ों का इस्तेमाल उसी की सेवा के लिए करना चाहिए। इसका मतलब यह होता है कि अगर हम सच्चे दिल से उसका नाम लें, तो हमको अपने आप अपने मन के विकारों से, झूठ से और बुरे ख़यालों से छुटकारा मिल जाता है।

प्रार्थना के शुरू में हर दिन ईशोपनिषद का जो पहला श्लोक

पढ़ा जाता है. उसमें हमसे यह कहा गया है कि हम अपना सब कुछ भगवान् के हवाले कर दें और फिर अपनी जरूरत के मुताबिक उसका उपयोग करें। इसमें खास शर्त यह है कि हमें दूसरों की चीज को लालच की निगाह से नहीं देखना चाहिए। इन दो हिदायतों में हिन्दू धर्म का सारा निचोड़ आ गया है!

सुबह की प्रार्थना में पढ़े जाने वाले एक दूसरे श्लोक में कहा गया है. 'मैं राज्य नहीं चाहता. स्वर्ग भी नहीं चाहता. न मैं मोक्ष या निर्वाण चाहता हूँ। मैं तो सिर्फ यही चाहता हूँ कि जो दुःखों के ताप से तपे हुए हैं. मैं उनके दुःख को दूर कर सकूँ।' यह दुःख जिस्म का भी हो सकता है और दिल का या आत्मा का भी। अपने विकारों की गुलामी के कारण होने वाला आत्मा का दुःख कभी-कभी शारीरिक दुःख से भी ज्यादा होता है। लेकिन भगवान् खुद दुःख मिटाने के लिए नहीं आता। वह किसी आदमी को अपना निमित्त बनाता है। इसलिए भगवान से दूसरों के दुःखों को दूर करने की शक्ति मांगने का मतलब यह होना चाहिए कि हम खुद उसके लिए मेहनत करने को हर तरह तैयार रहें। आप देखेंगे कि यह प्रार्थना सब के लिए है। किसी जाति या फिरके तक महदूद नहीं। इसमें सब कोई शामिल हो सकते हैं। यह सारी मनुष्य-जाति के लिए है। इस लिए जिस दिन यह पूरी होगी, उस दिन दुनिया में स्वर्ग का राज्य कायम हो जायगा।'

———

१२—रामनाम यक़ीनी इमदाद है

यह उन दिनों की बात है जब कि भारत में कैबिनेट मिशन आया हुआ था और इच्छा के न रहते हुए भी महात्मा गांधी को

शिमला जाना पड़ा था। इसलिए शिमला पहुँते ही उन्होंने प्रार्थना-सभा में इस प्रकार कहा था, "मैं नहीं जानता था कि मुझे शिमला आना होगा। मगर जो ईश्वर पर भरोसा रखते हैं उन्हें इस बात की तैयारी रखनी चाहिए कि जहाँ वह भेजेगा, चले जायँगे। आप में से कोई कह नहीं सकता कि कल क्या होगा। हमारे मन की मन ही में रह जाती है। इसलिए सब कुछ ईश्वर पर ही छोड़ दें तो जो होना होगा, होता रहेगा।

कैबिनेट मिशन के बारे में मैं कुछ कहना नहीं चाहता। उनका काम चल रहा है। उसके बारे में आपको जिज्ञासा भी नहीं रखनी चाहिए। कल मैंने दिल्ली में प्रार्थना के बाद कहा था कि कैबिनेट मिशन अपने आप कुछ नहीं कर सकता। जितनी हमारी ताकत है, उतना ही वह कर पायेगा। ज्यादह करेगा, तो अतिरेक (बदहजमी) होगा। हम उसे बर्दाश्त नहीं कर सकेंगे। अगर आखिर में कुछ भी न हुआ, तो भी मेरा मन न उन्हें कोसेगा, न गालियाँ देगा, न यह कहेगा कि वे निकम्मे थे। यही कहेगा कि हम कमजोर थे, हम निकम्मे थे। अगर हममें जोर होता, तो उन्हें हमारी बात तो सुननी ही थी। जोरदार का मतलब यह नहीं कि तलवार हमारे हाथ में हो। बरसों से हम कहते आ रहे हैं कि हम अमन से, शान्ति से स्वराज्य लेंगे। इसका मतलब यह है कि हमें अमन से, शान्ति से, अहिंसा से रहना आना चाहिए।

बहुत लोग मानते हैं कि इस बार तो कैबिनट मिशन कुछ-न कुछ करके जायगा। इसका मतलब यह है कि अंगरेजी हुकूमत यहाँ से उठ जायगी। मुझे भी यही उम्मीद है। बाकी करना तो ईश्वर के हाथ में है।

अब मैं दूसरी बात पर आऊँ, जो मैं कहना चाहता हूँ। पिछली बार भी मैंने कहा तो था। लेकिन सत्य ऐसी चीज है कि

चीख-चीख कर कितनी ही वार उसे क्यों न दोहरायें, उससे थकान नहीं होती, जिस तरह अल्लाह या ईश्वर का नाम रटने से नहीं होती। दम्भी (फरेबी) आदमी भी मुँह से तो ईश्वर का नाम लेते हैं, मगर वगल में छुरी हो, तो वह किस काम का ? अगर हृदय से रामनाम लिया जाय, तो कभी थकान मालूम नहीं होगी। इसलिए मैं जो कुछ आपको कहना चाहता हूँ उसे दोहरा दोहरा कर भी कहूँ, तो उसमें कोई हर्ज नही। उसका असर आप पर होगा।

'ईशोपनिषद्' के पहले मंत्र में कहा गया है कि ईश्वर से सारा जगत् आच्छादित (भरा) हुआ है। सव कुछ ईश्वर का ही है, हमारा कुछ नहीं। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह एक वार अपना सव कुछ ईश्वर को अर्पण कर दे, और उसके वाद सेवा के लिए जितनी जरूरत हो उतनी मात्रा में ही लेकर उसका उपयोग करे, उससे ज्यादह एक कण भी न ले। दूसरों के धन की इच्छा तक न करे। सेवा के लिए उसे जितना चाहिए, उसको छोड़कर वाकी सव को पराया धन समझे। मेरी ही मिसाल लीजिए। मैं इस महल में पड़ा हूँ। इसका मतलव यह नहीं कि चूँकि यह मुझे मिल गया है, मैं सारे-का-सारा अपने काम में ले लूँ।

टालसटाय ने अपनी एक अमर कहानी में इस सवाल का जवाव दिया है कि आदमी को कितनी जमीन चाहिए। शैतान एक आदमी को फुसलाता है और वरदान देता है कि वह एक साँस से दौड़कर जितनी जमीन को घेर ले, उतनी ही उसकी हो जायगी। वेचारा आदमी लालच का मारा आगे दौड़ता ही जाता है। आखिर सूरज के डूबने तक जहाँ से चला था, वहाँ पर वापस पहुँचते ही उसका दम निकल जाता है और उसे दफ़नाने के लिए सिर्फ छः फ़ीट जमीन काम आती है। इसी तरह

अगर मैं अपने आपको धोखा देकर यह मानने लगूँ कि मुझे सारे-के-सारे बंगले की जरूरत है, तो मेरा जैसा कोई मूर्ख नहीं। सिर्फ उलटी खोपड़ी वाला आदमी ही इस मंत्र का यह अर्थ कर सकता है कि बस, एक बार ईश्वर के आगे भोग लगाने के बाद जो चाहो सो हड़प कर जाओ। यह तो मंत्र के असल मानों की हँसी उड़ाना होगा।

नये और चटकीले-भड़कीले कपड़े पहनने के बदले अगर कोई फटे-पुराने मगर मरम्मत किये हुए कपड़े पहने तो वह मुझको ज्यादा अच्छा लगेगा। फटे कपड़े पहनना आलस्य की निशानी है।

इसी तरह अगर कोई आदमी मुझको २५ हजार रुपये की रकम दे देता है और मैं उसको अपने मौज शौक में खर्च कर देता हूँ तो मेरी कीमत एक कौड़ी की हो जाती है। मगर सारी रकम के मेरे हाथ में रहने पर भी मैं उसमें से अपनी जरूरत के लिए एक कौड़ी खर्च करूं तो उसमें मेरी कीमत है। तभी यह माना जायगा कि मैं 'ईशोपनिषद्' के मंत्र का मतलब समझा हूँ। इतनी बात आप समझ लें, तो बड़ा काम कर लें।"

इस प्रकार आत्म निरीक्षण पर विचार करनेके बाद महात्मा गांधी ने आत्म-संयम पर भी अपने विचार प्रकट करते हुए कहा था, "आत्म-संयम के लिए एक भाई ने तीन तरीके बताये हैं, जिनमें दो बाहरी और एक अन्दरूनी है। 'अन्दरूनी' मदद के बारे में यों लिखते हैं—

तीसरी चीज जो आत्म-संयम में मदद करती है, 'रामनाम' है। इसमें काम-वासना को ईश्वर-दर्शन की पवित्र इच्छा में बदल देने की बहुत जबर्दस्त ताकत है। दर असल अनुभव से मुझे लगता है कि करीब-करीब सभी इन्सानों में जो काम-वासना पाई जाती है, वह एक तरह की 'कुण्डलिनी शक्ति' है, जो अपने

आप बढ़ती और विकसित होती रहती है। जिस तरह सृष्टि (खलक़) के शुरू से ही इन्सान कुदरत के खिलाफ़ लड़ता आया है उसी तरह अपनी 'कुण्डलिनी' इस स्वाभाविक गति के खिलाफ़ भी उसे लड़ना चाहिए, और उसे नीचे की तरफ न जाने देकर ऊपर की ओर ले जाना चाहिए—ऊर्ध्वरेता बनना चाहिए। जहाँ एक बार 'कुण्डलिनी' का ऊपर चलना शुरू हुआ कि वह मस्तिष्क की तरफ चलने लगती है और आदमी धीरे-धीरे ऊर्ध्वरेता बन खुद अपने आप में और अपने चारों तरफ दिखाई देनेवाले दूसरे आदमियों में एक ही ईश्वर को देखने लगता है।'

इसमें कोई शक नहीं कि, 'रामनाम' सबसे ज्यादा यक़ीनी इमदाद है। अगर दिल से उसका जप किया जाय तो वह हर एक बुरे खयाल को फौरन दूर कर सकता है, और जब बुरा खयाल मिट गया तो उसका बुरा असर होना मुमकिन नहीं। अगर मन कमजोर है तो बाहर की सब इमदाद बेकार है, और मन पवित्र है, तो वह सब ग़ैर जरूरी है। इसका यह मतलब हर्गिज़ नहीं समझना चाहिए कि एक पवित्र मनवाला आदमी सब तरह की छूट लेते हुए भी बेदाग़ बचा रह सकता है। ऐसा आदमी खुद ही अपने साथ कोई छूट न लेगा। उसका सारा जीवन ही उसकी अन्दरूनी पवित्रता का सच्चा सबूत होगा। गीता में ठीक ही कहा है कि आदमी मन ही उसे बनाता है और वही उसे बिगाड़ता भी है। मिल्टन जब यह कहता है कि 'इंसान का मन ही सब कुछ है, वही स्वर्ग को नरक और नरक को स्वर्ग बना देता है' तो वह भी इसी विचार की तशरीह या व्याख्या करता है।"

——

१३–ईश्वर ही हिंसा को रोक सकता है

एक अँग्रेज़ मिलिटरी अफ़सर से कोई गांधी जी के अनुयायी मिलने गये थे। उससे बातें करने के बाद उन्होंने महात्मा गांधी को जो पत्र लिखा था, वह इस प्रकार का था. "कुछ दिन पहले मैं पूना में एक अंग्रेज मिलिटरी अफ़सर से मिला था। वह विलायत जा रहे थे। उन्होंने मुझसे कहा कि अब हिन्दुस्तान में हिंसा बढ़ रही है और आगे और भी बढ़ेगी। लोग अहिंसा के रास्ते को छोड़ते जा रहे हैं। उन्होंने यह भी कहा, 'हम लोग हिंसा में मानते हैं। हिंसा से हमारा जीवन बँधा पड़ा है कई गुमाम देशों ने हिंसा के ज़रिये अपनी आजादी हासिल की है और आजकल वे सुख से दिन बिता रहे हैं। हमने हिंसा को रोकने के लिए अणु-गोले भी निकाला। दुनिया जानती है कि किस तरह थोड़े वक्त के अन्दर ही हमने खूँखार लड़ाई को अणु-गोले की मदद से बन्द कर दिया।'

साहब बहादुर और कहने लगे, 'हिन्दुस्तान में महात्मा गांधी ने लोगों को अहिंसा का रास्ता बताया है। लेकिन क्या गांधी जी ने अणु-गोले जैसी कोई चीज निकाली है जिसका इस्तेमाल करने से लोग फ़ौरन अहिंसा के रास्ते आ जायँ और देश में शांति का राज कायम हो जाय? क्या अब गाँधी जी का अणु-गोला देश को हिंसा के रास्ते जाने से रोक नहीं सकता?

फिर वह मुझसे बोले, 'आप अपने गांधी जी से क्यों नहीं कहते कि वे इस वक्त देश पर अपनी शक्ति छोड़ें, जिससे लोग हिंसा के रास्ते को तर्क कर दें और फिर से सब मिलकर अहिंसा

अख्तियार कर लें। मैं तो कहता हूँ कि अगर गांधी जी इस भीषण हिंसा को, जो आज सारे हिंदुस्तान में फैल रही है, अभी से नहीं रोकेंगे, तो बाद में उनको बहुत ही दुःखी होना पड़ेगा और उनका इतने दिनों का काम बर्बाद हो जायगा।'

आशा है आप कृपा कर इन अंग्रेज अफसर की शंका का जवाब देंगे।"

इस पत्र का उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने लिखा था, "इस सवाल में काफी विचार-दोष पाता हूँ। अणु-गोले ने हिंसा को नहीं रोका है। लोगों के मन में तो हिंसा भरी है और तीसरी लड़ाई की तैयारियाँ होती दिखाई पड़ती हैं। यह कहना फजूल है कि हिंसा से किसी को सुख-चैन मिला है। फिर भी यह कोई नहीं कहता कि हिंसा से कुछ हो ही नहीं सकता।

मैं हिंसा को रोक न सकूँ तो मुझे पछताना पड़ेगा, ऐसी कोई बात अहिंसा में हो ही नहीं सकती। कोई भी आदमी हिंसा को रोक नहीं सकता। ईश्वर ही हिंसा को रोक सकता है। मनुष्य को तो वह निमित्त मात्र बनाता है। हिंसा किसी बाहरी प्रयोग से रोकी नहीं जा सकती। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि कोइ बाहरी प्रयोग हो नहीं सकता या होता नहीं। बाहरी उपायों के होते हुए भी वह रुकी, ईश्वर की कृपा से ही रुकेगी। हाँ, इतना कहूँगा कि ईश्वर की कृपा रूढ़ प्रयोग है। ईश्वर अपने कानून के मुताबिक ही चलता है। इसलिए हिंसा उस कानून के मुताबिक ही रुकेगी।

हम ईश्वर के सब कानूनों को जानते नहीं हैं, न कभी पूरे-पूरे जानेंगे। इसलिए जो प्रयत्न हमसे बन सकें, सो हम करते रहें। इतना और भी कह दूँ कि मेरा विश्वास है कि हिन्दुस्तान में अहिंसा का प्रयोग काफी हद तक सफल हुआ है। मैं मानता हूँ कि सवाल में जो निराशा जाहिर की गई है उसकी कोई गुंजा-

यश नहीं है। आखिर अहिंसा जगत् का एक महान् सिद्धा
उसे कोई मिटा नहीं सकता। मेरे जैसे हज़ारों के उसपर
करते-करते मर जाने से भी वह सिद्धान्त मिट नहीं स
मर कर ही अहिंसा का प्रचार बढ़ेगा।"

१४—ईश्वर में श्रद्धा रखनी चाहिए

"सभी प्रार्थना, फिर वह किसी भी ज़बान या कि
मज़हब की क्यों न हो, एक ही ईश्वर की जाती है और
इन्सान को यह सिखाती है कि सब एक ही परिवार के है
सब को एक-दूसरे से मुहब्बत करनी चाहिए।" इसे फ़कीर
शाह खान ने प्रार्थना-सभा में समझाते हुए कहा था और
बातों को गुँजाते हुए महात्मा गाँधी ने कहा था:—

"अपने धर्म या मज़हब को बड़ा और दूसरों के ध
मज़हब को छोटा मानना सच्चे धर्म को ग़लत शकल
करना है, उसका मज़ाक उड़ाना है। सभी धर्मों में सब
मौजूद एक ही ईश्वर की पूजा करने की बात कही गई है
तो पानी की एक बूँद में या धूल के एक जर्रे में भी मौज
जो लोग मूरत की या बुत की पूजा करते हैं वे मूर्ति के पत्थ
पूजा नहीं करते, बल्कि वे उसमें रहने वाले ईश्वर को देख
कोशिश करते हैं। इसी तरह पारसियों को आग की पूजा
वाला या सूरज को पूजा करने वाला कहना उसको ब
करना है।

डाक्टर दिनशा मेहता ने पारसी धर्म का जो मंत्र पढ़
वह हिन्दुओं के गायत्री मंत्र से मिलता है। उसमें ईश्व

शुद्ध पूजा ही कही गई है। अलग-अलग मजहब एक ही पेड़ के अलग-अलग पत्तों की तरह हैं। कोई दो पत्ते एक-से नहीं होते। फिर भी उनमें या जिन डालियों में वे लगते हैं, उनके बीच कोई दुश्मनी नहीं होती। इसी तरह ईश्वर की सृष्टि में हमें जो अनेकता दिखाई पड़ती है उसके अन्दर एक एकता रही है।"

तीन दलों वाली कान्फरेन्स के दूसरे मेम्बरों के शिमला से लौटने पर दिल्ली में अटकल बाजी का पारा चढ़ गया था। लोग कैबिनेट मिशन के जल्दी ही होने वाले ऐलान के बारे में तरह-तरह की अटकलें लगाने लगे थे। उसका जिक्र करते हुए महात्मा गाँधी ने कहा था:—

"दोस्त मुझसे बराबर यह पूछ रहे हैं कि मिशन के पैग़ाम में क्या-क्या हो सकता है? मैं इसे नहीं जानता, न मैं अटकल लगाता हूँ। उसमें क्या होगा, इसका ख़याल करना भी बेकार है। प्रार्थना में यक़ीन रखने वाला आदमी और कुछ कर ही नहीं सकता। भला-बुरा जो कुछ होगा अगले २६ घंटों के अन्दर आप सबको मालूम हो जायगा। तब आप चाहें, उसे मंजूर करें, चाहे ठुकरा दें। आपको छूट है।

बाहर की तरफ़ देखने के बदले आप अपने को अन्दर से टटोलिए और ईश्वर से पूछिए कि भली-बुरी हर हालत में आपका फर्ज क्या होना चाहिए। फिलहाल तो आपके और मेरे लिए यह जान लेना काफी है कि कैबिनेट मिशन अपना घर-बार छोड़कर यहाँ इतनी दूर इस बात का पता लगाने के लिए आया है कि किस तरह हिन्दुस्तान से ब्रिटेन की हुकूमत उठे और बर्तानिया का आखिरी सिपाही कब हिन्दुस्तान छोड़कर चला जाय। हिन्दुस्तान छोड़ने या न छोड़ने की बात पर गौर करने के लिए वह नहीं आया है।

मिशन के लिए यह जान लेना जरूरी था कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग में मेल पैदा किया जा सकता है या नहीं। अंग्रेजी हुकूमत ने ही इन दोनों को एक-दूसरे से अलग किया था। ऐसी हालत में अगर कैबिनेट मिशन उन्हें मिलाने में नाकाम रहा, तो इसमें अचरज की कोई बात नहीं। ज्यों ही जाहिर तौर पर हिन्दुस्तान से अंग्रेजी हुकूमत उठ जायगी, त्यों ही हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच मेल पैदा हुए बिना न रहेगा। कैबिनेट मिशन को यह देखना है कि कैसे एक मिनट की भी देर किये बिना हिन्दुस्तान छोड़ा जा सकता है।"

इतना ही नहीं, महात्मा गाँधी ने यह भी कहा था, "लेकिन मान लीजिए कि इससे बिलकुल उलटी चीज़ हो जाती है, तो नुकसान उनका होगा, हमारा नहीं। हमने अपने लिए खुद तकलीफ उठाने का रास्ता चुना है। हम अपनी तकलीफों के जरिये आगे आगे बढ़ते और ऊपर उठते हैं। यह कुदरत का कानून है। जो अपने गन्दे स्वार्थ से या खानदानी हितों से चिपके रहते हैं, नुकसान उठाते हैं। इन्सान इस दुनिया में इसलिए भेजा जाता है कि जरूरत पड़ने पर वह अपनी जान को दाँव पर लगाकर भी अपना फर्ज अदा करे। इसलिए कर्तव्य या फर्ज को पूरा करते हुए जो मुसीबतें पेश आएँ उनका हमें दिलेरी के साथ सामना करना चाहिए।

हम सब, क्या हिन्दू और क्या मुसलमान, एक हैं—अखंड हैं। अगर हममें से कोई गलती करता है; तो सब को उसका फल भुगतना पड़ता है। ईश्वर ने इस दुनिया को कुछ इस तरह बनाया है कि यहाँ कोई भी आदमी अपनी अच्छाई या बुराई को अपने तक ही नहीं रख सकता। समूची दुनिया इन्सान के जिस्म की तरह है, जिसके अपने अलग-अलग हिस्से होते हैं। अगर जिस्म के किसी हिस्से में दर्द उठता है, तो सारा जिस्म उसे

महसूस करता है। अगर वदन का कोई हिस्सा सड़ गया है तो वह लाजिमी तौर पर सारे वदन को सड़ा देगा। इसलिए हमें चाहिए कि हम सिर्फ अपनी-ही-अपनी न सोचें। हमको ईश्वर में श्रद्धा (एतकाद) रखनी चाहिए और वेफिक्र वन जाना चाहिए। हमारी तकदीर हमारे ही हाथ में है, और हम ही उसे वना या विगाड़ सकते हैं।

आप अपने को दूसरों की वातों में वहा न दीजिए। और पहले से कोई खयाल वनाकर न रखिए, वल्कि मिशन की ओर से जो दस्तावेज पेश हो उसको आप खुद ध्यान से पढ़िये और फिर उस पर अपनी राय कायम कीजिए।

अखवारों से राय उधार लेने की आदत को मैं अच्छा नहीं समझता। अखवार तो हकीकतों को समझने और उन पर गौर करने के लिए हैं। हमें इसका खयाल रखना चाहिए कि कहीं वे आजादी के साथ सोचने की हमारी आदत को मिटा न डालें। याद रखिए कि अंग्रेजी जवान एक ऐसी जवान है जिस पर पूरा कावू पाना मुश्किल है। मेरी ही मिसाल लीजिए। मैं अंग्रेजी वोलने वालों के वीच करीव २० साल तक रहा हूँ। फिर भी मैं यह दावा नहीं कर सकता कि मुझे उस पर पूरा कावू हासिल है। इसलिए मिशन की दरख्वास्तों वाले दस्तावेज को आप हिन्दुस्तानी में पढ़िए, ताकि आप उसके सही-सही मानों को ठीक से समझ सकें।

मिशन का ऐलान आपको पसन्द पड़े, चाहे न पड़े, इसमें कोई शक नहीं कि हिन्दुस्तान की तवारीख में वह एक वड़ी मार्के की चीज होगी। इसलिए यह जरूरी है कि उस पर वहुत गहराई से गौर किया जाय। प्रार्थना में श्रद्धा रखने वालों के नाते हमारा आपका यह फर्ज है कि हम-आप अपने को पूरी तरह ईश्वर के हाथों में छोड़ दें और उससे प्रार्थना करें कि वह हमें रोशनी

वख्से और इस कदर शुद्ध बनावे कि जिससे हम सब दस्तावेज को सही तौर से समझ सकें।"

जब १८ मई सन् १९४६ ई० को कैबिनेट मिशन का ऐलान छपा और उस दस्तावेज की जाँच-पड़ताल करने का समय आया तब उसके पहले ही प्रार्थना-सभा में श्रीमती सुचेता कृपलानी ने एक भजन गाया था। उसको अपने प्रवचन का आधार बनाकर महात्मा गांधी ने उसमें सुझाये आदर्श की रोशनी में कैबिनेट मिशन के ऐलान की जाँच-पड़ताल शुरू की थी। भजन में एक ऐसे देश का जिक्र था जहाँ न दुःख-शोक है, न आफत-मुसीबत। सवाल यह था कि कैबिनेट मिशन का ऐलान हमको कहां तक इस आदर्श के नजदीक ले जाना चाहता है? महात्मा गांधी ने कहा था,

"कवि कहता है, हम एक ऐसे मुल्क के रहने वाले हैं, जहाँ न दुःख-शोक है, न आफत-मुसीबत। इस दुनिया में ऐसा मुल्क कहां पाया जा सकता है? मैं बहुत घूमा भटका हूँ, लेकिन मैं कबूल करता हूँ कि मुझे अभी तक ऐसा मुल्क कहीं नहीं मिला। आगे चलकर कवि ने इस आदर्श को पाने की शर्तें बयान की हैं। हर आदमी खुद तो उन शर्तों का आसानी से पालन कर सकता है. क्योंकि जो आदमी हकीकत में और सचमुच ही दिल का साफ-पाक है, उसके लिए तो न कहीं दुःख शोक है, आफत-मुसीबत। लेकिन करोड़ों के लिए इस हालत को पहुँचाना या पाना मुश्किल है। फिर भी हम चाहते तो हैं कि हमारा हिन्दुस्तान ऐसा ही एक मुल्क बने।"

चूँकि महात्मा गांधी पहले लोगों से कह चुके थे कि वे कैबिनेट मिशन के बयान को देखने पर दूसरे लोगों की राय का खयाल न करते हुए स्वतन्त्र रीति से उनकी जांच-पड़ताल करें। वे उस मुल्क के नुक्ते-निगाह से उसे जांचे, जिसमें न दुःख-शोक

होगा, न आफत मुसीबत। इसीलिए उन्होंने कहा था, "मैं इस बारे में अपने खयाल आपको सुनाऊँगा। लेकिन अगर मेरी बातें आपको न जँचें, तो मैं आपसे यह न कहूँगा कि आप उन्हें मानें या उन पर अमल करें। ऐसा करना तो मेरी अपनी ही बात को काटना होगा। हर एक मर्द और औरत को खुद अपने लिए सोचना चाहिए। आप दूसरों की राय को अपनी कसौटी पर कसिए और जिसे आप हजम कर सकें, उसे अपनाइए।

कल रात को जैसे ही मिशन का ऐलान मेरे हाथ में पड़ा, मैं उसको सरसरी निगाह देख गया। आज सुबह मैंने उसे गौर के साथ पढ़ा। वह कोई फैसला नहीं है। मिशन ने और वाइसराय ने दोनों दलों को एक जगह लाने की कोशिश की थी। वे उनमें कोई समझौता नहीं करा सके। इसलिए उन्होंने मुल्क से यह सिफारिश की है कि उनकी राय में कांस्टिट्युएण्ट एसेम्बली (विधान-परिषद्) के लिए किन बातों को कबूल करना मुनासिब होगा। इस एसेम्बली को हक होगा कि वह इन सिफारिशों को बदले, नामंजूर करे या इन्हें सुधारे। उनकी सिफारिशों में 'ले लो या छोड़ दो'-जैसी कोई बात नहीं है।

अगर उसमें किसी तरह की पाबन्दियां हुईं, तो कान्स्टिट्यु-एण्ट एसेम्बली सार्वभौम सत्तावाली वह संस्था न रह जायगी, जिसे आजाद हिन्दुस्तान का विधान बनाने की पूरी स्वतन्त्रता हो। मिसाल के तौर पर मिशन ने सेण्टर या केन्द्र के लिए कुछ विषय सुझाये हैं। एसेम्बली को हक होगा कि वह मुसलमानों और गैर-मुसलमानों की अलग-अलग कसरत राय से इनमें कुछ विषय बढ़ाये या घटा भी दे। साथ ही एसेम्बली उन भेदों को भी मिटा सकती है जिन्हें मिशन को मजबूरन मानना पड़ा है। यही बात सूबों को अलग-अलग गिरोह में बाँटने के बारे में भी है।

अगर सूबे चाहें तो वे गिरोहबन्दी के इस खयाल को ही ठुकरा सकते हैं। गिरोहबन्दी के खयाल को मंजूर कर लेने पर भी किसी सूबे को किसी एक गिरोह में अपनी मर्जी के खिलाफ शामिल होने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। अपनी बात को समझाने के लिए सिर्फ ये दो मिसालें मैंने आपके सामने रक्खीं। मिशन के ऐलान में दूसरी भी ऐसी क़ाबिल-एतराज या क़ाबिल सुधार बहुत सी बातें हो सकती हैं, लेकिन मैंने उन सब का यहाँ ज़िक्र नहीं किया है।

मिशन के ऐलान को इस तरह समझने पर, जो मेरे खयाल में उसे समझने का सही तरीक़ा है, मुझे लगता है कि मिशन ने हमारे सामने एक ऐसी चीज़ पेश की है, जिस पर वह हर तरह नाज़ कर सकता है।

कैबिनेट मिशन के ऐलान के ही सिलसिले में महात्मा गांधी ने यह भी कहा था, "हममें कुछ लोग हैं जो कहते हैं कि अंग्रेज कभी कोई सही काम कर ही नहीं सकते। मैं उनकी इस बात को नहीं मानता। ईश्वर से डरकर चलने का जितना दावा हम अपने लिए करते हैं, कैबिनेट मिशन और वाइसराय भी उतने ही ईश्वर से डरनेवाले हैं। जब तक कोई आदमी अपनी बात का कच्चा या झूठा साबित न हो जाय, उस पर पहले से शक करने लगता है, इन्सान के नाते हमारी शान के खिलाफ है। स्व० चार्ली एण्डरूज़ पूरे पक्के अंग्रेज थे। उन्होंने अपने आपको हिन्दुस्तान की सेवा में खपा दिया। उनके देश के हर आदमी पर पहले से शक करना बहुत बड़ी ग़लती होगी। अंगरेजी हुकूमत ने हिन्दुस्तान को कितना ही नुक़सान क्यों न पहुँचाया हो, अगर मिशन का बयान सच्चा है, और मैं मानता हूँ कि वह सच्चा है, तो वह एक ऐसे क़र्ज़ को चुकाने के लिए है, जो उनकी राय में ब्रिटेन पर हिन्दुस्तान का है। और वह यह है

कि वे हिन्दुस्तान की पीठ पर से उतर जाँय, यानी हिन्दुस्तान छोड़कर चले जाँय। इसमें वह चीज मौजूद है, जो हमारे मुल्क को एक ऐसे मुल्क में बदल सकता है, जहाँ न दुःख-शोक होंगे और न आफ़त-मुसीबत।

(लेकिन इस वक्तसवाल यह हो सकता है कि) जो हिन्दुस्तान आज दुःख-दर्द आफत-मुसीबत का घर बना हुआ है, उसको आप लोग भजन में कहे गये आदर्श देश में कैसे बदल सकेंगे? इस सवाल का जवाब आपको अभी-अभी गाये गये पेड़ोंवाले भजन से मिलेगा। इस भजन में हमसे कहा गया है कि हम इन पेड़ों से सबक सीखें।

ये सूरज की तेज धूप में तपते हैं और अपना आसरा लेने वालों को छाँह देते हैं। जो इन पर पत्थर फेंकते हैं उनके लिए ये अपने फल गिरा देते हैं। यह सच्ची सखावत या दानशीलता है। भजन में कहा गया है कि ऐसी दानशीलता या सखावत सीखने के लिए हमें हरिजनों के पास जाना चाहिए। आज समाज ने हरिजनों को गन्दगी और गिरी हुई हालत में रख छोड़ा है। यह उनके लिए नहीं, बल्कि हमारे लिए शर्मिन्दा होने की बात है।

समाज ने उनको अछूत माना है और उन्हें गन्दी बस्तियों में रहने के लिए मजबूर किया है। और फिर भी वे हैं कि बहुत कलील तनख्वाह लेकर वे समाज की इतनी बेशक़ीमती और अनमोल सेवा करते रहते हैं। अगर वे चाहते तो ज्यादा फायदेमन्द पेशे अख्तियार कर सकते थे, जैसा कि उनमें से कुछने किया भी है। लेकिन उनकी बहुत बड़ी तादाद ने ऐसा नहीं किया, यह उनके लिए शोभा की बात है। अगर अपनी अज्ञान और पिछड़ी हुई हालत के बावजूद वे सेवा की ऐसी स्पिरिट दिखा सकते हैं, तो आपही कहिए कि सवर्ण कहे जाने वालों को निस्वार्थ सेवा और त्याग की कितनी ज्यादा स्पिरिट दिखानी चाहिए।"

कैबिनेट मिशन के ऐलान को महात्मा गांधी ने एक ऐसा प्रामिसरी नोट कहा था, जिसकी कीमत उसके सच्चे और सिकरने लायक होने में है। इसीलिए उन्होंने कहा था, "प्र मिसरी नोट पर लिखा गया वादा पूरा न किया जाय, तो उसकी कोई कीमत नहीं रह जाती और वह फाड़कर रद्दी की टोकरी में फेंकने के काबिल ही रह जाता है। मेरे लिए सच ही सब कुछ है। मैं सचाई को छोड़कर स्वराज्य लेना भी कबूल नहीं करूँगा। क्योंकि इस तरह का स्वराज्य एक धोखा होगा। मैं चाहता और मानता हूँ और आपसे यह भी कहता हूँ, कि आप चाहिए और मनाइए कि कैबिनेट मिशन के ऐलान पर पूरा पूरा अमल किया जायगा, और ईश्वर मिशन के मेम्बरों को अपने प्रामिसरी नोट का भुगतान करने में उसी तरह मदद देगा जिस तरह पुराने ज़माने में उसने अपने भक्तों को मदद दी थी !"

१५—प्रार्थना का उद्देश्य

"प्रार्थना या नमाज़ का एक ही मकसद है और वह यह है कि हम अपने आप को तमाम गन्दगी और कमीनेपन से बरी कर लें ताकि हम दुनिया के तमाम इन्सानों के साथ सारे मानव परिवार के साथ, अपनी एकता के बन्धन को महसूस कर सकें। बदकिस्मती से आज लोग अपनी इस असली एकता को भूल गये हैं और आपस में अदावत वाले गिरोहों में बँट गये हैं। यह सब एक दुःखदायी मोह का नतीजा है। प्रार्थना की मदद से हमें इस काबिल बनना है कि हम किसी एक कौम या फिरके की नहीं, बल्कि ख़ुदा के समूचे खल्क की खिदमत कर सकें। ख़ुदा ने इसीलिए हमको इस दुनिया में भेजा है।"

फ़क़ीर बादशाह ख़ान ने दूसरी बार प्रार्थना सभा में इस तरह प्रार्थना के मतलब और उसकी अहमियत को समझाया था और इसी का समर्थन करते हुए महात्मा गांधी ने समझाया था—

"अगर आपने बादशाह ख़ान की बातों को ग़ौर से सुना है और समझा है तो आप जान सकेंगे कि प्रार्थना का मतलब ईश्वर को खुश करना नहीं है। क्योंकि उसे हमारी प्रार्थना या तारीफ़ की कोई जरूरत नहीं। प्रार्थना तो हम अपने-आपको साफ़-पाक बनाने के लिए करते हैं। ईश्वर सब कहीं है। वह विश्व के जर्रे-जर्रे में मौजूद है। आत्म-शुद्धि का यानी अपने-आप को साफ़-पाक बनाने का तरीका यह है कि हम ईश्वर की मौजूदगी को अपने अन्दर गहराई से महसूस करें। इस तरह जो ताकत हमें मिलती है उससे बढ़कर दूसरी कोई ताकत नहीं।

आपको इतनी बड़ी तादाद में प्रार्थना में हाज़िर रहते देखकर मुझे खुशी होती है। लेकिन अगर मुझे पता चला कि आप यहाँ सिर्फ़ तमाशा देखने के खयाल से आते हैं या मेरे राजनीतिक (सयासी) ख्याल सुनने को आते हैं, जो कि और भी बुरी चीज़ है, तो मुझे दुःख होगा। वैसे नियम तो यह होना चाहिए कि राजनीति किसी भी तरह प्रार्थना पर हावी न हो पाये—उसमें दख़ल न दे पाये। फिर भी मैं प्रार्थना के बाद की अपनी बातचीत में राजनीतिक मसलों का ज़िक्र किये बिना रह नहीं सकता, उसे टाल नहीं सकता, क्योंकि जिन्दगी को इस तरह अलग-अलग खानों में बाँटा नहीं जा सकता ईश्वर की मौजूदगी को तो हमें अपनी ज़िन्दगी के हर पहलू में महसूस करना है।

अगर आप यह सोचते हैं कि प्रार्थना की जगह से जाने के तुरन्त बाद आप किसी भी तरह रह और बरत सकते हैं, तो आपका प्रार्थना में हाजिर रहना बेकार है। अगर प्रार्थना में आपकी दिलचस्पी सच्ची है, तो मैं उम्मीद करता हूँ कि आज

की तरह कल भी आप इतनी ही बड़ी तादाद में शरीक होंगे।"

— —

१६—मध्यविंदु ईश्वर ही हो सकता है

कुदरती इलाज (उपचार) के कार्यों को सफल बनाने के लिए जब महात्मा गांधी कांचन गाँव नामक स्थान में गये हुए थे तब उन्होंने इस सम्बन्ध में अपने विचारों को इस प्रकार प्रकट करते हुए लिखा था,

"हिन्दुस्तान के देहात में कुदरती उपचार कैसे चल सकता है, कांचन गाँव उसका एक नमूना बन सकेगा, इस उम्मीद से और कांचन-निवासियों के कहने से मैं वहाँ चला गया, और काम शुरू किया। ग्राम-वासियों ने मदद की। वहाँ जो जमीन मिलने वाली थी और मकान बनाने वाले थे, सो तो कुछ हो नहीं सका है। देहातियों ने पैसे तो दिये हैं, लेकिन पैसे देने से काम नहीं निपटता है। लोगों को जमीन ढूँढनी चाहिए, मकान बनाने में मदद करनी चाहिए। लोगों का इस काम में रस लेना पैसे देने से ज्यादा जरूरी है

लेकिन जो मैं लिखना चाहता हूँ सो तो दूसरी चीज है। वहाँ के सेवक मुझे लिखते हैं कि कांचन-वासी कुदरती उपचार को समझने लगे हैं और उसकी कदर करते हैं। सेवकों को इतना भरोसा हो गया है कि मैं जून महीने तक भी कांचन गाँव में न पहुँचूँ, तो कोई फिकर नहीं। वे कहते हैं कि कांचन गाँव में लोगों की तरफ से ऐसा सुन्दर साथ मिल रहा है कि पंचगनी-महाबलेश्वर से उतर कर ही कांचन जाऊँ, तो भी कोई हर्ज नहीं। यह सब सुनकर मुझे अच्छा लगता है, और इससे ऐसा अनुमान

ाया जा सकता है कि दूसरे देहात भी कुदरती उपचार की
दर करेंगे।

कुदरती उपचार के दो पहलू हैं: एक ईश्वर की शक्ति यानी
ामनाम* से दर्द मिटाना और दूसरे, ऐसे उपाय करना कि दर्द
दा ही न हो सके। मेरे साथी लिखते हैं कि काँचन गाँव के

---

*पाठकों के हितार्थ वेदव्यास-रचित श्री रामाष्टक स्तोत्र दिया जा
ा है। आशा है इसके लिए पाठक क्षमा करेंगेः—

भजे विशेष सुन्दरं समस्त पाप खंडनम् ।
स्वभक्त-चित्त-रंजनं सदैव राममद्वयम् ।
जटा-कलाप-शोभितं समस्तपाप-नाशनम् ।
स्वभक्त-भीति-भंजनं भजेह राममद्वयम् ॥
निज-स्वरूप-बोधकं कृपाकरं भवापहम् ।
समंशिवं निरंजनं भजेह राममद्वयम् ॥
सह प्रपंञ्च-कल्पितं ह्यनामरूप वास्यवम् ।
निराकृतिं निरामयं भजेह राममद्वयम् ॥
निष्प्रपञ्च-निर्विकल्प—नर्मलं निरामयम् ॥
चिदेकरूप — संततं भजेह राममद्वयम् ॥
भवाब्धि-पोत-रूपकं ह्यशेष-देह-कल्पितम् ।
गुणाकरं कृपाकरं भजेह राममद्वयम् ॥
महासुवाक्य बोधकं विराजमान वाक्पदैः ।
परब्रह्म व्यापकं भजेह राममद्वयम् ॥
शिवप्रदं सुखप्रदं भवच्छिदं भ्रमापहम् ।
विराजमन दैशिकं भजेह राममद्वयम् ॥
रामाष्टकं पठति यः सुकरं सुपुण्यं ।
व्यासेन भाषितमिदं शृणुते मनुष्यः ।
विद्यां श्रियं विपुलसौख्यमनन्त कीर्तिं
संप्राप्य देह विलये लभते च मोक्षम् ॥

लोग गांव को साफ रखने में मदद देते है। जिस जगह शरीर-सफाई घर-सफाई और ग्राम-सफाई हो, युक्ताहार हो और योग्य व्यायाम हो वहाँ कम-से-कम बीमारी होती है। और अगर चित्त शुद्धि भी हो, तो कहा जा सकता है कि बीमारी असम्भव यानी नामुमकिन हो जाती है। रामनाम के बिना चित्त-शुद्धि नहीं हो

श्री शिव जी ने कहा, "जिस श्री रामहृदय को स्वयं श्री रामचन्द्र ने अपने भक्त हनुमान जी को बतलाया था उसी को मैं कह रहा हूँ:-

आकाशस्य यथा भेदस्त्रिविधो दृश्यते महान्।
जलाशये महाकाशस्तदवच्छिन्न एव हि ॥
प्रतिबिम्बाख्यमपरं दृश्यते त्रिविधं नभः।
बुद्ध्यवच्छिन्न चैतन्यमेकं पूर्णमथापरम ॥
आभासस्त्वपरं बिंबभूतमेव त्रिधा चितिः।
साभास बुद्धेः कर्तृत्वविच्छिन्नेऽविकारिणि ॥
साक्षिण्यारोप्यते भ्रान्त्या जीवत्वं च तथाऽबुधैः।
आभासःतुमृषाबुद्धिरविद्या कार्य मुच्यते ॥
अविच्छिन्नं तु यद्ब्रह्म विच्छेदस्तु विकल्पितः।
अविच्छिन्नं य यत्पूर्णं न एकत्वं प्रतिपाद्यते ॥
तत्त्वमस्यादिवाक्यैश्च साभासस्याहमस्तथा।
ऐक्यज्ञनं यदोत्पन्नं महावाक्येन चात्मनोः।
तदाविद्या स्वकार्यैश्च नश्यत्येव न संशयः।
एतद्विज्ञाय मद्भक्तो मद्भावोयोपपद्यते ॥
मद्भक्तिविमुखानां हि शास्त्र-गर्तेषु मुह्यताम।
न ज्ञानं न च मोक्षः स्यात्तेषां जन्मशतैरपि ॥
इदं रहस्यं हृदयं ममात्मनो।
मयैव साक्षात्कथितं तवानघ ॥
मद्भक्ति—हीनाय शठाय न त्वया।
दातव्य मैन्द्रादपि राज्यतोऽधिकम् ॥

सकती। अगर देहात वाले इतनी बात समझ जायँ तो वैद्य, हकीम या डाक्टर की जरूरत न रह जाय।

काँचन गांव में गायें नाम को ही हैं। इसे मैं कम-नसीबी मानता हूँ। कुछ भैंसे हैं, लेकिन मेरे पास जितने प्रमाण हैं वे बताते हैं कि गाय सब से ज्यादा उपयोगी प्राणी है। गाय का दूध भी खाने में आरोग्यप्रद है और गाय का जो उपयोग किया जा सकता है वह भैंस का कभी नहीं किया जा सकता। मरीजों के लिए तो वैद्य लोग गाय के दूध का ही उपयोग बतलाते हैं। इसलिए मैं उम्मीद रक्खूँगा कि कांचन-वासी उरुली में गायों का एक जूथ रक्खेंगे जिससे सब लोगों को गाय का ताजा और साफ दूध मिल सके। सेहत अच्छी रखने के लिए दूध की बहुत ज्यादा जरूरत रहती है।

मकान जितनी जल्दी बन सकें उतना ही अच्छा है। एक बात तो यह है कि श्री दातार के बंगले का उपयोग कहाँ तक करना ठीक होगा, और दूसरी व ज्यादा महत्त्व की बात यह है कि जब तक मकान नहीं बनता तब तक उपचार आसानी से किये नहीं जा सकते। कभी-कभी मरीजों को उपचार-गृह में रखना भी जरूरी हो जाता है। मैं आशा यह रक्खूँगा कि कांचन ग्राम सब तरह से आदर्श गाँव बने। कुदरती उपचार के गर्भ में यह बात रही है कि मानव-जीवन की आदर्श रचना में देहात की या शहर की आदर्श रचना आ ही जाती है और उसका मध्य-बिन्दु तो ईश्वर ही हो सकता है।"

१७—रामनाम का मजाक

कुदरती उपचार से सम्बन्ध रखनेवाले लेखों को पढ़कर कुछ लोगों ने शंका उठाते हुए महात्मा गाँधी से इस प्रकार के

प्रश्न किये, "जब आप गरीब आदमियों से जुवार की 'भाखरी' छोड़कर मोसंबी का रस या दूसरे फल और दूध लेने को कहते हैं, तो यह गरीबी का उपहास करने जैसा लगता है। मैंने देखा है कि गरीब देहाती अपनी तंगदस्ती छिपाने के लिए 'भाखरी' खाकर भी हमसे कहते थे कि उन्होंने दूध पिया है। इन गरीब आदमियों के लिए तो जीवन का मतलब दिन-रात काम में जुटे रह कर किसी तरह अपने बच्चों का और अपना पेट भर लेना ही है। उन्हें अपने जान की इतनी पर्वाह नहीं होती जितनी अपने खेत और बच्चों की। कई देहातियों ने मुझे बतलाया है कि वे जमींदार और साहूकार के नौकरों की गाली और लात घूँसे सहने की बनिवस्त बुखार से मर जाना ज्यादा पसन्द करते हैं। देहातियों की आज की माली हालत को देख कर मैं कह सकता हूँ कि कुदरती इलाज सिर्फ उन लोगों के लिए है, जिनके पास पैसा है और वक्त है, उन गरीबों के लिए नहीं, जो एक घंटे की भी देर कर दें, तो उन्हें मजदूरी न मिले और उनको व उनके बाल-बच्चों को फाका करना पड़ जाय।

अगर वाकई आप कुदरती इलाज के जरिये गरीब देहातियों की सेवा करना चाहते हैं, तो आपको ऐसे उपचार-गृह खोलने चाहिए. जहाँ रोगियों के रहने की व्यवस्था हो, उन्हें खाने पीने को रस और दूध मिल सके और ओढ़ने-बिछाने को साफ कपड़े मिलें। यही नहीं, बल्कि अगर रोगी कमाने वाला आदमी है, तो जितना वह रोज कमाता है, कम-से-कम उतने पैसे भी उसके घर वालों को मिलने चाहिए।

जैसा कि आप कहते हैं, कुदरती इलाज जीवन बिताने का एक नया ढंग है, तो क्या इलाज के साथ ही वैसा जीवन बिताने की तालीम और उसको अमल में लाने के साधन भी उन्हें देने की ज़रूरत नहीं है?"

इन सब प्रश्नों का उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने अपना विचार इस प्रकार प्रकट किया था, "यह शंका उठाकर सवाल पूछने वाले अपना अज्ञान ज़ाहिर करते हैं। मैंने जो लिखा है, उसे विचार-पूर्वक पढ़ने की कोशिश तक नहीं की गई है। क़ुदरती उपचार के गर्भ में यह बात रही है कि उसमें कम-से-कम खर्च और कम-से-कम व्यवसाय होना चाहिए।

क़ुदरती उपचार का आदर्श ही यह है कि जहाँ तक संभव हो, उसके साधन ऐसे होने चाहिए कि उपचार देहात में ही हो सके। जो साधन नहीं हैं, वे पैदा किये जाने चाहिए। क़ुदरती उपचार में जीवन-परिवर्तन की बात आती है। वह कोई वैद्य की दी हुई पुड़िया लेने की बात नहीं है और न अस्पताल जाकर मुफ्त दवा लेने या उसमें रहने की बात है। जो मुफ्त दवा लेता है, वह भिक्षुक बनता है। जो क़ुदरती उपचार करता है वह कभी भी भिक्षुक नहीं बनता। वह अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाता है और अच्छा बनने का उपाय ख़ुद ही कर लेता है।

वह अपने शरीर में से ज़हर निकालकर ऐसी कोशिश करता है कि जिससे दुबारा बीमार न पड़ सके। और क़ुदरती इलाज में मध्यबिन्दु तो रामनाम ही है, न? रामनाम से आदमी सुरक्षित बनता है। शर्त यह है कि नाम भीतर से निकलना चाहिए। और रामनाम के भीतर से निकलने के लिए नियम पालन ज़रूरी हो जाता है। उस हालत में मनुष्य रोग-रहित होता है। इनमें न कष्ट की बात है, न खर्च की।

मोसंबी खाना उपचार का अनिवार्य अंग नहीं। पथ्य खाना-युक्ताहार लेना—अवश्य अनिवार्य अंग है। हमारे देहात हमारी तरह ही कंगाल हैं। देहात में साग-सब्ज़ी, फल दूध वगैरह पैदा करना क़ुदरती इलाज का ख़ास अङ्ग है। इसमें जो वक्त खर्च होता है, वह व्यर्थ तो है ही नहीं। बल्कि उससे सभी देहातियों

को और आखिरकार सारे हिन्दुस्तान को लाभ होता है। यह बात ठीक है कि देहात में और शहरों में भी ऐसे उपचार-गृह होने चाहिए। ईश्वर की कृपा होगी, तो सब हो जायगा। हर एक व्यक्ति का काम तो यह है कि अपना फ़र्ज़ अदा करे और फल ईश्वर पर छोड़ दे।"

रामनाम का मज़ाक किस तरह हमारे देश में किया जाता है; इसका उल्लेख करते हुए किसी सज्जन ने महात्मा गांधी को इस प्रकार लिखा था, "आप जानते हैं कि आज हम इतने जाहिल हो गये हैं कि जो चीज़ हमें अच्छी लगती है या जिस महापुरुष को हम मानते हैं, उसकी आत्मा को उसके सिद्धान्तों को, न लेकर हम उसके भौतिक शरीर की पूजा करने लगते हैं। राम लीला, कृष्णलीला और हाल में ही बना गांधी-मन्दिर इसके जिन्दा प्रमाण है। बनारस का रामनाम बैंक और रामनाम छपा कपड़ा पहनना या शरीर पर रामनाम लिखकर घूमना 'राम-नाम' का मज़ाक और हमारा पतन नहीं है तो क्या है? ऐसी हालत में 'रामनाम' का प्रचार करके क्या आप इन ढोंगियों के हाथ में पत्थर नहीं दे रहे हैं? अन्तर प्रेरणा से निकला हुआ 'रामनाम' ही रामबाण हो सकता है। और मैं मानता हूँ कि ऐसी अन्तर प्रेरणा सच्ची धार्मिक शिक्षा से ही मिलेगी।"

इसका उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने कहा था, "यह ठीक कहा है। आजकल हमारे अन्दर इतना वहम फैला हुआ है। और इतना दम्भ चलता है कि सही चीज़ करने से भी डरना पड़ता है। लेकिन इस तरह डरते रहने से तो सच को भी छिपाना पड़ सकता है। इसलिए सुनहला क़ानून तो यही है कि जिसे हम सही समझें, उसे निडर होकर करें। दम्भ और झूठ तो जगत् में चलता ही रहेगा। हमारे सही चीज़ करने से वह कुछ कम ही होगा, बढ़ कभी नहीं सकता। यह ध्यान रहे कि जब चारों

और झूठ चलता हो, तब हम भी उसी में फँस कर अपने को धोखा न दें। अपनी शिथिलता के कारण हम अनजाने भी ऐसी ग़लती न करें। हर हालत में सावधान रहना तो कर्त्तव्य ही है। सत्य का पुजारी दूसरा कुछ कर ही नहीं सकता। रामनाम जैसी रामबाण औषध लेने में सतत जागृति न हो, तो रामनाम फोकट जाय और हम बहुत से वहमों में एक और वहम बढ़ा दें।"

—:-:—

१८—रामनाम की शक्ति

कैबिनेट मिशन के ऐलान के बाद का क़रीब-क़रीब सारा वक्त वर्किङ्ग कमेटी के साथ की चर्चाओं में ही बीतने लगा था फिर भी महात्मा गांधी ने राम-नाम को नहीं भुलाया था। जिस प्रकार वे प्रार्थना सभाएँ किया करते थे, उसी प्रकार बराबर करते रहे। इन्हीं दिनों की एक प्रार्थना-सभा में ओखला के बालिका-श्रम की कुछ हरिजन लड़कियों ने प्रार्थना के वक्त जो भजन गाया था उसमें कहा गया था कि चूँकि भगवान् सबका उद्धार करनेवाला है पतित उधारन है, इसलिए किसी दिन वह हमारा भी उद्धार करेगा।

इस पर महात्मा गांधी ने कहा था, "मुक्ति या नजात का पुराना ख़याल आनेवाली ज़िन्दगी में मुक्ति पाने का है। लेकिन मैं तो आपसे यह कहना चाहता हूँ कि अगर हम मुक्ति की ज़रूरी शर्तों को पूरा करें, तो भजन में जिस मुक्ति का वादा किया गया है, वह हमें यहीं और आज ही मिल सकती है। वे

शर्तें ये हैं—(१) अपनी आत्म-शुद्धि करना और (२) ईश्वर के क़ानून को मानना।

यह सोचना फ़जूल है और हमें गिराने वाला है कि हमारी आनेवाली ज़िन्दगी में ईश्वर मुक्ति देनेवाले की हैसियत से हमको बचाकर अपने विरद को सँभालेगा जब कि इस ज़िन्दगी में हम अपने सिर पाप के बोझ को लादते चले जायँगे। जो व्यापारी अपने भोले-भाले और नासमझ गाहकों को धोखा देता है और झूठ बोलता है, उसे अपने उद्धार की कोई उम्मीद नहीं रखनी चाहिए—वह रख नहीं सकता।

कहा जाता है कि जो खुद अच्छा है उसके लिए सारी दुनिया अच्छी बन जाती है। जहाँ तक एक आदमी का सवाल है, यह बात सच है। लेकिन भलाई या अच्छाई तभी बा-असर बनती है, जब वह बुराई के मुकाबले में बरती जाती है। अगर आप सिर्फ भलाई करते हैं, तो वह एक सौदा हो जाता है और उसमें कोई ख़ासियत नहीं रहती लेकिन आप बुराई के बदले में भलाई करते हैं, तो वह एक नज़ात बख्शनेवाली ताक़त बन जाती है। उसके सामने बुराई ख़त्म हो जाती है और वह बरफ की गेंद की तरह अपने क़द और चाल में इस हद तक बढ़ती चली जाती है कि फिर कोई उसे रोक नहीं सकता।

यह तो एक आदमी के उद्धार की बात हुई। लेकिन हिन्दुस्तान के जैसा एक ग़ुलाम मुल्क अपने को ग़ुलामी से किस तरह छुड़ा सकता है? (इस प्रश्न को स्वयं महात्मा गांधी ने उठाया था और स्वयं उसका उत्तर देते हुए कहा था) ग़ुलामी की वजह से ग़ुलाम क़ौमों में जो बुराई पैदा हो जाती हैं, वे ही मुल्क को ग़ुलाम बनाये रखती हैं। इसलिए अपने-आपको सुधारने का रास्ता ही ग़ुलाम मुल्क को उसकी ग़ुलामी से छुड़ाने का रास्ता

भी है। आने वाले जीवन में मुक्ति पाने की उम्मीद से अपनी मुक्ति के दिन को आगे ठेलते रहना फ़जूल है।

अगर आप यहाँ, इस जीवन में, मुक्ति पाने में नाकाम रहे हैं तो बहुत मुमकिन है कि वहाँ भी वह आपके हाथ से सटक जाय। इसलिए हमें अपने दिल के अन्दर से टटोलना चाहिए और उसे सब तरह की गन्दगी से बरी करना चाहिए। अगर हम अपने छोटे छोटे झगड़ों को और दुश्मनियों को भुला दें और सब तरह के कौमी तफ़रक़ों व छोटे-छोटे भेद-भावों को ठुकरा दें, तो परदेशी फौजों के लिए यहाँ कोई काम ही न रह जाय और किसी की यह ताकत न रहे कि वह एक दिन के लिए भी हमको गुलामी में रख सके।"

"सब से ऊँची प्रेम-सगाई" ऐसा भजन जब प्रार्थना-सभा में गाया गया तब उस पर महात्मा गांधी ने कहा था, "इस भजन में कवि ने प्रेम के बन्धन की या अहिंसा की महिमा गाई है। प्रेम से बढ़कर ऊँचा और मज़बूत दूसरा कोई बन्धन नहीं। सुदामा के प्रेम के वश होकर भगवान् श्रीकृष्ण ने एक मैले चिथड़े में बँधे टूटे चावलों को बड़े शौक से खाया था और दुर्योधन के अनूठे और जायकेदार फलों को छोड़कर उन्होंने विदुर के घर का साग-पात खाना पसन्द किया था। इसी तरह अर्जुन की प्रेम भरी भक्ति के वश होकर श्रीकृष्ण अपने ऊँचे शाही पद को भूल गये और उन्होंने अर्जुन के सारथी का काम करना कबूल किया।

कहा जाता है कि महाभारत की लड़ाई में अर्जुन अपने गाण्डीव के बल पर नहीं, बल्कि खासकर रथ हाँकनेवाले श्रीकृष्ण की कुशलता के कारण ही विजय हासिल कर सके थे। प्रेम की सेवा से बढ़कर ऊँची दूसरी कोई सेवा नहीं, जो आदमी आदमी की कर सके। ऐसी सेवा अपने लिए बदले में कुछ नहीं चाहती। जब प्रेम बदले की या मुआवजे की उम्मीद रखता है, तो वह एक

गन्दा सौदा बन जाता है अपनी ऊँची जगह से गिर जाता है। लेकिन सहज प्रेम के साथ की गई सेवा आदमी को शुद्ध बनाती और ऊँचा उठाती है।

× × × अगर लोग सचाई का बेजा इस्तेमाल करते हैं और धोखे-धड़ी से काम लेते हैं तो मैं उसकी परवाह क्यों करूं? जब तक मुझे अपनी सचाई का पक्का भरोसा है, मैं इस डर से कि लोग उसे ग़लत समझेंगे या उसका ग़लत इस्तेमाल करेंगे, उसका ऐलान करने से रुक कैसे सकता हूँ? इस दुनिया में ऐसा कोई नहीं है, जिसने पूरी-पूरी सचाई को जाना हो। यह तो अकेले एक ईश्वर का ही विशेषण है। हम सब तो सिर्फ़ सापेक्ष सत्य को ही जानते हैं। इसलिए जिसे हम जानते हैं उसी के मुताबिक अपना बरताव रख सकते हैं। इस तरह सचाई का पालन करने से कोई कभी गुमराह नहीं हो सकता।

इसे महात्मा गांधी ने एक ऐसे पत्र के जवाब में कहा था जिसमें लिखा था, "कुछ लोग अन्धविश्वास की वजह से कपड़ों पर रामनाम छपवा लेते हैं; और उन्हें अपने बदन पर, ख़ासकर छाती पर पहनते ओढ़ते हैं। दूसरे कुछ लोग काग़ज़ के टुकड़ों पर बारीक हरूफों में करोड़ों की तादाद में रामनाम लिखते हैं और उन्हें काट-काट कर उनकी छोटी-छोटी गोलियाँ इस खयाल से निगल जाते हैं कि इस तरह वे यह दावा कर सकेंगे कि राम-नाम उनके दिल में छप गया है।" इसी प्रकार जब एक दूसरे भाई ने महात्मा गांधी से पूछा था कि क्या उन्होंने राम-नाम को सब तरह की बीमारियों का एक ही रामबाण इलाज कहा है? और क्या उनके ये राम ईश्वर के अवतार और अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र थे? और जब कुछ ऐसे भी लोग पाये गये जो मानते थे कि गांधी जी खुद भुलावे में पड़े हुए हैं और

अंधविश्वासों से भरे इस देश के हजारों अंधविश्वासों में एक और अंधविश्वास बढ़ाकर दूसरों को भी भुलावे में डालने की कोशिश कर रहे हैं।

इन्हीं सब बातों पर महात्मा गाँधी ने कहा था, "जिस राम नाम को मैं सब बीमारियों की रामबाण दवा कहता हूँ, वह राम न तो ऐतिहासिक या तवारीख राम है, और न उन लोगों का राम है, जो उसका इस्तेमाल जादू-टोने के लिए करते हैं। सब रोगों की रामबाण दवा के रूप में मैं जिस राम का नाम सुझाता हूँ, वह तो खुद ईश्वर ही है, जिसके नाम का जप करके भक्तों ने शुद्धि और शान्ति पाई है और मेरा यह दावा है कि राम-नाम सभी बीमारियों की, फिर वे तन की हों, मन की हों या रूहानी हों, एक ही अचूक दवा है।

इसमें शक नहीं कि डाक्टरों या वैद्यों से शरीर की बीमारियों का इलाज कराया जा सकता है। लेकिन राम-नाम तो आदमी को खुद ही अपना वैद या डाक्टर बना देता है और उसे अपने को अन्दर से नीरोग बनाने की संजीवनी हासिल करा देता है। जब कोई बीमारी इस हद तक पहुँच जाती है कि उसे मिटाना मुमकिन नहीं रहता, उस वक्त भी राम-नाम आदमी को उसे शान्त और स्वस्थ भाव से सह लेने की ताकत देता है।

जिस आदमी को राम-नाम में श्रद्धा है, वह जैसे-तैसे अपनी जिन्दगी के दिन बढ़ाने के लिए नामी-गरामी डाक्टरों और वैद्यों के दर की खाक नहीं छानेगा और यहाँ से वहाँ मारा-ढकेला नहीं फिरेगा। राम-नाम डाक्टरों और वैद्यों के बिना भी अपना काम चला सकनेवाला बनाने की चीज है। राम-नाम में श्रद्धा रखने वाले के लिए वही उसकी पहली और आखिरी दवा है।

मनुष्य का भौतिक शरीर तो आखिर एक दिन मिटने ही वाला है। उसका स्वभाव ही है कि वह हमेशा के लिए रह ही

नहीं सकता, और तिस पर भी लोग अपने अन्दर रहनेवाली अमर आत्मा को भुलाकर उसी का ज्यादा प्यार-दुलार करते हैं। राम नाम में श्रद्धा रखनेवाला आदमी अपने शरीर को ऐसे झूठे लाड़ नहीं लड़ायेगा. वल्कि उसे ईश्वर की सेवा करने का एक ज़रिया-भर समझेगा। उसको इस तरह का माकूल ज़रिया वनाने के लिए राम-नाम से बढ़कर दूसरी कोई चीज नहीं। राम-नाम को हृदय में अंकित करने के लिए अनन्त धीरज की, वेइन्तिहा सब्र की, जरूरत है। इसमें जुग के जुग लग सकते हैं, लेकिन यह कोशिश करने जैसी है। इसमें कामयावी भी भगवान् की कृपा से ही मिल सकती है।

जब तक आदमी अपने अन्दर और बाहर सचाई, ईमानदारी और पार्गीजगी या पवित्रता के गुणों को नहीं वढ़ाता, उसके दिल से राम-नाम नहीं निकल सकता। हम लोग रोज़ शाम की प्रार्थना में स्थितप्रज्ञ का यानी सावित-अक्ल इन्सान का वयान करनेवाले श्लोक पढ़ते हैं। हममें हर एक आदमी सावित-अक्ल या स्थितप्रज्ञ वन सकता है, वशर्ते कि वह अपनी इन्द्रियों को अपने कावू में रक्खे और जीवन को सेवामय वनाने के लिए ही खाये पीये और मौज-शौक या हँसी-विनोद करे। मसलन् अपने विचारों पर अगर आपका कोई कावू नहीं है और अगर आप एक तंग-अंधेरी कोठरी में उसकी तमाम खिड़कियाँ और दरवाजे वन्द करके सोने में कोई हर्ज नहीं महसूस करते और गन्दी हवा लेते हैं या गन्दा पानी पीते हैं तो, मैं कहूँगा कि आपका राम-नाम लेना वेकार है!

लेकिन इसका मतलव यह नहीं कि चूँकि आप जितने चाहिए उतने पवित्र नहीं हैं, इसलिए आपको राम-नाम लेना छोड़ देना चाहिए। क्योंकि पवित्रता या पाकीजगी हासिल करने के लिए भी राम-नाम लेना मुफीद है। जो आदमी दिल से राम नाम

लेता है, वह आसानी से अपने-आप पर काबू रख सकता है और 'डिसिप्लिन' या अनुशासन में रह सकता है। उसके लिए तन्दुरुस्ती और सफाई के कानूनों का पालन करना सहल हो जायगा। उसकी ज़िन्दगी सहज भाव से बीत सकेगी—उसमें कोई विषमता न होगी। वह किसी को सताना या दुःख पहुँचाना पसन्द नहीं करेगा।

दूसरों के दुःखों को मिटाने के लिए, उन्हें राहत पहुँचाने के लिए खुद तकलीफ उठा लेना उसकी आदत में आ जायगा और उसको हमेशा के लिए एक अमिट सुख का लाभ मिलेगा—उसका मन एक शाश्वत और अमर सुख से भर जायगा। इसलिए मैं कहता हूँ कि आप लगे रहिए और जब तक काम करते हैं, तब तक सारा समय मन ही मन राम-नाम लेते रहिए। इस तरह करने से एक दिन ऐसा भी आयेगा कि जब राम-नाम आपका सोते-जागते का साथी बन जायगा और उस हालत में आप ईश्वर की कृपा से तन, मन और आत्मा से पूरे-पूरे स्वस्थ और तन्दुरुस्त बन जायँगे।

आप सब मेरे साथ राम-नाम लेने या रामनाम लेना सीखने के लिए रोज-ब-रोज इन प्रार्थना-सभाओं में आते रहे हैं। लेकिन राम-नाम सिर्फ जबान से नहीं सिखाया जा सकता। मुँह से निकले बोल के मुकाबले दिल का खामोश खयाल या मौन विचार कहीं ज्यादा ताकत रखता है। एक एक सच्चा विचार सारी दुनिया पर छा सकता है—उसे प्रभावित कर सकता है। वह कभी बेकार नहीं जाता। विचार या खयाल को बोल या काम का जामा पहनाने की कोशिश ही उसकी ताकत को महदूद कर देती है। ऐसा कौन है जो अपने विचार या खयाल को शब्द या कार्य में पूरी तरह प्रकट करने में कामयाब हुआ हो?

आप यह पूछ सकते हैं कि अगर ऐसा है, तो फिर आदमी हमेशा के लिए मौन ही क्यों न ले ले ? उसूलन् तो यह मुमकिन है, लेकिन जिन शर्तों के मुताबिक मौन-विचार पूरी तरह क्रिया की जगह ले सकते हैं, उन शर्तों को पूरा करना बहुत मुश्किल है। मैं खुद अपने विचारों पर इस तरह का पूरा-पूरा काबू पा लेने का कोई दावा अपने लिए नहीं कर सकता। मैं अपने मन से वे-मतलब और बेकार के ख़यालों को पूरी-पूरी तरह दूर नहीं रख सकता। इस हालत को पाने या इस तक पहुँचने के लिए तो अनन्त धीरज जागृति और तपश्चर्या की जरूरत है।

कल जब मैंने आपसे यह कहा था कि राम-नाम की शक्ति का कोई पार नहीं है, तब मैं किसी आलंकारिक भाषा में नहीं बोल रहा था, बल्कि मैं सचमुच यही कहना भी चाहता था। मगर इस चीज को महसूस करने के लिए बिलकुल शुद्ध और पवित्र हृदय से राम-नाम का निकलना जरूरी है। मैं ख़ुद इस हालत को पाने की कोशिश में लगा हुआ हूँ। मेरे दिल में तो इसकी एक तसवीर खिंच गई है, लेकिन मैं इसे पूरी तरह अमल में ला नहीं सका हूँ। जब वह हालत पैदा हो जायगी, तब तो रामनाम रटना भी जरूरी न रह जायगा।

"मुझे उम्मीद है कि मेरी गैर हाजिरी में भी आप अपने घरों में अलग-अलग और एक साथ बैठकर रामनाम लेते रहेंगे। सब के साथ मिल कर, मजमें की शकल में। प्रार्थना करने का राज़ या रहस्य यह है कि उसका एक-दूसरे पर जो शान्त प्रभाव पड़ता है, वह आध्यात्मिक उन्नति रूहानी तरक्की की राह में मददगार हो सकता है।"

———

१६—विश्वास-चिकित्सा और रामनाम

किसी सज्जन ने महात्मा गांधी को इस प्रकार का एक पत्र लिखा था, "मैंने १७-३-४६ के 'हरिजन' में आपका लेख "जब 'जागे तभी सवेरा' पढ़ा है। क्या आपका क़ुदरती इलाज और विश्वासी-चिकित्सा कुछ मिलती-जुलती चीजें हैं ? बेशक मरीज़ को इलाज में श्रद्धा (एतक़ाद) तो होनी ही चाहिए, लेकिन कई ऐसे इलाज हैं, जो सिर्फ़ विश्वास से ही रोगी को अच्छा कर देते हैं, जैसे, माता (चेचक), पेट का दर्द वग़ैरह बीमारियों के।

शायद आप जानते हों, माता का, खासकर दक्षिण प्रान्तों में कोई इलाज नहीं किया जाता। इसे सिर्फ ईश्वर की माया मान लिया जाता है। हम मरिअम्मा देवी की पूजा करते हैं। बहुत-से लोग तिरुपति में देवी की मिन्नते मानते हैं। बहुत-से रोगी अच्छे हो जाते हैं। यह चीज़ एक करामात-सी लगती है। जहाँ तक पेट दर्द की बात है बहुत से लोग तिरुपति में देवी की मिन्नतें मानते हैं। अच्छे होने पर उसकी मूर्ति के हाथ पाँव धोते हैं। और दूसरी मानी हुई मिन्नतों को पूरा करते हैं। मेरी ही माँ की मिसाल लीजिए। उनको पेट में दर्द रहता था। पर तिरुपति ही आने के बाद उनकी वह तकलीफ़ दूर हो गई।

कृपा करके इस बात पर रोशनी डालिए और यह भी कहिए कि क़ुदरती इलाज पर भी लोग ऐसा ही विश्वास क्यों न रक्खें ? इससे डाक्टरों का बार बार का खर्च बच जायगा, क्योंकि जैसा कि बासर कहता है, डाक्टर का तो काम ही है कि वह दवाई बेचने वाले से मिलकर बीमार को हमेशा बीमार बनाये रक्खे।"

इन मिसालों पर बोलते हुए महात्मा गांधी ने कहा था, "जो मिसालें ऊपर दी गई हैं, वे न तो कुदरती इलाज की ही हैं, और न ही 'रामनाम' की, जिसको मैंने इसमें शामिल किया है। पर उनसे यह पता ज़रूर चलता है कि कुदरत बहुत से रोगियों को बिना किसी इलाज के भी अच्छा कर देती है। मिसालें यह भी दिखाती हैं कि हिन्दुस्तान में वहम हमारी ज़िन्दगी का कितना बड़ा हिस्सा बन गया है। कुदरती इलाज का मध्य-बिन्दु (मरक़ज़ी नुक्ता) यानी राम-नाम तो वहम का दुश्मन है। जो बुराई करने के लिए झिझकते नहीं, वे रामनाम का नाजायज फ़ायदा उठायेंगे। पर वे तो हर चीज या हर उसूल के साथ ऐसा ही करेंगे। खाली ज़बान से रामनाम रटने से इलाज का कोई लेन-देन नहीं।

अगर मैं ठीक समझा हूँ तो जैसा कि लेखक ने बताया है, विश्वास-चिकित्सा में यह माना जाता है कि रोगी अन्ध-विश्वास से अच्छा हो जाता है। यह मानना तो ज़िन्दा ख़ुदा के नाम की हँसी उड़ाना है। रामनाम सिर्फ कल्पना (तख़ैयुल) की चीज़ नहीं, उसे तो दिल से निकलना है। परमात्मा में ज्ञान के साथ विश्वास हो और उसके साथ-साथ कुदरत के नियमों (क़ानूनों) का पालन किया जाय, तभी किसी दूसरी मदद के बिना रोगी बिलकुल अच्छा हो सकता है। उसूल यह है कि शरीर की सेहत तभी बिलकुल अच्छी हो सकती है, जब मन की सेहत पूरी-पूरी ठीक हो। और मन पूरा-पूरा ठीक तभी होता है जब दिल पूरा-पूरा ठीक हो। यह वह दिल नहीं, जिसे डाक्टर टोंटियों से देखते हैं, बल्कि वह दिल है, जो ईश्वर का घर है।

कहा जाता है कि अगर कोई अपने अन्दर परमात्मा को पहचान ले, तो एक भी गन्दा या फ़जूल ख़याल मन में नहीं आ सकता। जहाँ विचार शुद्ध हों वहाँ बीमारी आ ही नहीं सकती।

ऐसी हालत को पहुँचना शायद कठिन हो। पर इस बात को समझ लेना सेहत की पहली सीढ़ी है, समझने के साथ-साथ कोशिश भी करना। जब किसी के जीवन में यह बुनियादी तबदीली (परिवर्तन) आती है, तो उसके लिए स्वाभाविक (फितरती) हो जाता है कि वह उसके साथ-साथ क़ुदरत के उन तमाम क़ानूनों का पालन भी करे, जो आज तक मनुष्य ने ढूँढ़ निकाला है। जब तक उनमें बेपर्वाही की जाय, तब तक कोई यह नहीं कह सकता कि उसका हृदय पवित्र है।

यह कहना ग़लत न होगा कि अगर किसी का हृदय पवित्र है, तो उसकी सेहत राम-नाम न लेते हुए भी उतनी ही अच्छी रह सकती है। बात सिर्फ यह है कि सिवा राम-नाम के पवित्रता पाने का और कोई तरीका मुझे मालूम नहीं। दुनिया में हर जगह पुराने ऋषि भी इसी रास्ते पर चले हैं। और वे तो ख़ुदा के बन्दे थे, कोई वहमी या ढोंगी आदमी नहीं।

अगर इसी का नाम 'क्रिश्चियन सायन्स' है तो मुझे कुछ कहना नहीं। मैं यह थोड़े ही कहता हूँ कि राम-नाम मेरी ही शोध (दरियाफ़्त) है। जहाँ तक मैं जानता हूँ, राम-नाम तो ईसाइ धर्म से भी पुराना है।

एक भाई पूछते हैं कि क्या राम-नाम में ज़र्राही (शस्त्र-क्रिया) इलाज की इजाज़त नहीं? क्यों नहीं? एक टाँग अगर हादसे (दुर्घटना) में कट गई है, तो राम-नाम उसे थोड़े ही वापस ला सकता है। लेकिन बहुत-सी हालतों में आपरेशन ज़रूरी नहीं होता। मगर जहाँ ज़रूरी हो, वहाँ करवा लेना चाहिए। सिर्फ इतनी बात है कि अगर ख़ुदा के किसी बन्दे का हाथ-पाँव जाता रहा, तो वह इसकी चिन्ता नहीं करेगा। राम-नाम कोई अटकल पच्चू तजवीज़ नहीं है, न ही कोई काम चलाऊ चीज़।"

— —

२०—रामनाम की कृपा होगी तो

धर्म और अधर्म का विवेक करते हुए किसी सज्जन ने महात्मा गांधी को लिखा था, "५ मई सन् (सन् १९४६) के 'हरिजन बन्धु' में आपने लिखा है कि आपकी अहिंसा में भयानक प्राणियों को, मसलन् शेर, भेड़िया, साँप, बिच्छू वग़ैरह को मार डालने की गुञ्जाइश है।

आप कुत्तों वग़ैरह को खाना नहीं देते। गुजराती समाज के अलावा और भी बहुत से लोग हैं, जो जानवरों को खिलाना पुण्य समझते हैं। आजकल जब कि ख़ूराक की इतनी तंगी है, ऐसा ख़याल नामुनासिब हो सकता है। मगर इतनी बात तो है कि ये जानवर (कुत्ते वग़ैरह) आदमी की काफ़ी सेवा करते हैं। इन्हें खिलाकर इनसे काम लिया जा सकता है।

आपने डरबन से स्व० श्री रामचन्द्र भाई को २७ सवाल पूछे थे। उनमें एक सवाल यह भी था कि जब साँप काटने आये तो क्या किया जाय? उन्होंने जवाब दिया था कि आत्मार्थी साँप को नहीं मारेगा। साँप काटे, तो उसे काटने देगा। मगर अबकी तो आप दूसरी ही बात कह रहे हैं। ऐसा क्यों?"

इस सम्बन्ध में महात्मा गांधी ने लिखा था, "इस बारे में मैं काफ़ी लिख चुका हूँ। उन दिनों सवाल पागल कुत्तों को मारने का था। काफ़ी चर्चा हुई थी। मगर मालूम होता है कि वह सब भूल गई है।

मैं जिस अहिंसा का पुजारी हूँ, वह निरी जीव-दया ही नहीं है। जैन-धर्म में जीव-दया पर ख़ूब वजन दिया गया है। वह समझ में आता है, मगर उसका यह मतलब हर्गिज़ नहीं कि

इन्सान को छोड़कर हैवानों पर दया की जाय। मैं मानता हूँ कि जहाँ जानवरों पर दया करने की बात लिखी है, वहाँ मनुष्य पर दया करने की बात तो मान ही ली गई है। ऐसा करने में हद छूट गई है और अमल में तो जीव-दया ने टेढ़ा रूप ही लिया है। जीव-दया के नाम पर अनर्थ हो रहा है। बहुत से लोग चींटियों को आटा डालकर सन्तोष मानते हैं। ऐसा मालूम होता है, मानो आजकल की जीव-दया में जान ही नहीं रही। धर्म के नाम पर अधर्म चल रहा है, पाखण्ड फैल रहा है।

अहिंसा सबसे ऊँचा धर्म है। वह बहादुरों का धर्म है, कायरों का कभी नहीं। दूसरे मारें, हिंसा करें और हम उससे फायदा उठायें और मानें कि हमने धर्म का पालन किया है, तो यह अपने आपको धोखा देना नहीं हुआ, तो और क्या हुआ?

जिस गाँव में रोज बाघ आता है, वहाँ नाम का अहिंसा-वादी नहीं रहेगा। वह तो वहाँ से भाग जायगा और जब कोई दूसरा आदमी उस बाघ को मार डालेगा तब वापस आकर अपने घर-बार पर क़ब्ज़ा करेगा। यह अहिंसा नहीं है। यह तो डरपोक की हिंसा है। बाघ को मारने वाले ने कुछ बहादुरी तो दिखाई, मगर जो दूसरे की हिंसा से लाभ उठाता है, वह कायर है। वह कभी अहिंसा को पहचान नहीं सकता।

देहधारी को कुछ-कुछ हिंसा तो करनी ही पड़ती है। असल धर्म एक होते हुए भी उसके बारे में हर एक की समझ अलग अलग होती है। इसलिए सब अपनी शक्ति और समझ के मुताबिक़ उस पर चलते हैं। एक का धर्म दूसरे के लिए अधर्म हो सकता है। मांस खाना मेरे लिए अधर्म है, मगर जो मांस पर ही पला है, जिसने मांस खाने में कभी बुराई नहीं मानी, वह मुझे देखकर मांस छोड़ दे, तो उसके लिए वह अधर्म होगा।

मुझे खेती करनी हो, जङ्गल में रहना हो, तो खेती के लिए लाजिमी (अनिवार्य) हिंसा मुझको करनी ही पड़ेगी। बंदरों, परिन्दों और ऐसे जन्तुओं को जो फ़सल खा जाते हैं, ख़ुद मारना होगा, या कोई ऐसा आदमी रखना होगा, जो उन्हें मारे। दोनों एक ही चीज है। जब अकाल सामने हो, तब अहिंसा के नाम पर फ़सल को उजड़ने देना मैं तो पाप ही समझता हूँ। पाप और पुण्य स्वतंत्र चीजें नहीं हैं। एक ही चीज एक समय पाप और दूसरे समय पुण्य हो सकती है। आदमी को शास्त्र-रूपी कुएं में डूब नहीं जाना है, बल्कि गोताखोर बनकर शास्त्र रूपी समुद्र में से मोती निकालने हैं। इसलिए क़दम-क़दम पर आदमी को हिंसा और अहिंसा का विवेक (तमीज) करना होता है। इसमें न शर्म की गुंजायश है, न डर की।

"हरिनों मारग छे शूरानों, नहिं कायरनुं काम जोने" (हरि का रास्ता बहादुरों का है, डरपोकों का उसमें कोई काम नहीं।)

आखिर श्री रामचन्द्र भाई ने तो यह लिखा था कि अगर मुझमें शक्ति हो और मैं आत्मा को पहचानना चाहता होऊँ, तो साँप के काटने आने पर मुझे चाहिए कि मैं उसे काटने दूँ। मैंने तो उसका ख़त मिलने से पहले या बाद में आज तक कभी साँप को मारा ही नहीं, इसे मैं अपनी बहादुरी नहीं समझता। मेरा आदर्श तो यह है कि मैं साँप और बिच्छू से बेधड़क खेल सकूँ। मगर आज तो मेरा यह एक मनोरथ ही है। मैं नहीं जानता कि यह मनोरथ कभी फलेगा या नहीं और अगर फला तो कब?

मैंने अपने आदमियों को सब जगह साँप और बिच्छू मारने दिये हैं। मैं चाहता तो उन्हें रोक सकता था। मगर रोकता कैसे? इन जानवरों को अपने हाथ में पकड़ कर दूसरों को निडर

बनाने की हिम्मत मुझमें नहीं थी। न होने की मुझे शर्म थी। मगर वह मेरे या उनके किस काम की ?

रामनाम की कृपा होगी, तो मुझे आशा करनी चाहिए, कि किसी रोज ऐसा करने की हिम्मत आ जायगी। मगर तब तक मैं तो ऊपर बताया हुआ धर्म ही जानता हूँ। धर्म भी तजर्बे से सीखा जाता है, कोरी पंडिताई से नहीं।"

२१—अगर हम ईश्वर के बच्चे हैं तो

भारतवर्ष की सभी संस्थाओं और उनके कार्यकर्त्ताओं के प्रति देश की रक्षा के उद्देश्य से महात्मा गांधी ने इस प्रकार कहा था, "कुछ पंडित उसे अनजाना कहते हैं, कुछ कहते हैं, जाना नहीं जा सकता। दूसरे उसे 'नेति-नेति' (यह नहीं, यह नहीं) कहते हैं। इस वक्त हमारे मतलब के लिए 'अनजाना' काफी है।

कल (९ जून सन् १९४६) जब प्रार्थना में मैंने लोगों से दो शब्द कहे, तो यही कह सका कि जितनी शक्ति हमें वह अज्ञात (अनजाना) दे सकता है और जहाँ तक वह रास्ता दिखा सकता है उसके लिए हम उससे प्रार्थना करें, और उसी पर भरोसा रक्खें। हिन्दुस्तान के सामने आज एक बड़ा नाटक खेला जा रहा है। उसमें हर एक पार्टी के रास्ते में बड़ी मुश्किलें हैं। उन्हें इसी 'अनजाने' पर भरोसा रखना चाहिए। वह इन्सान की अक़्ल को चक्कर में डाल सकता है और उसकी नाचीज़ तज-वीजों को एक पल में उलट-पुलट कर सकता है। ब्रिटिश पार्टी इस 'अनजाने' ईश्वर पर विश्वास रखने का दावा करती है। मुस्लिम लीग का भी यही कहना है। वह बड़े जोश से 'अल्ला-हो-

अकबर' के नारे लगाती है। कांग्रेस के पास इस क़िस्म का कोई एक नारा नहीं हो सकता। पर अगर वह सारे हिन्दुस्तान की नुमाइन्दा बनना चाहती है तो वह ईश्वर पर विश्वास रखने वाले करोड़ों की भी नुमाइन्दा है, चाहे वे ख़ुदा के घर के किसी भी हिस्से के रहने वाले हों।

मैं हमेशा आशावादी रहा हूँ। फिर भी यह लिखते वक़्त मैं पक्की तरह से नहीं कह सकता कि कम-से-कम सियासी (राजनीतिक) बोली में यह चीज़ महफ़ूज़ (सुरक्षित) है। इसलिए मैं यही कह सकता हूँ कि अगर सब पार्टियों की पूरी-पूरी और सच्ची कोशिश के होते हुए भी ऐसी चीज़ हो गई जो ग़ैर महफ़ूज़ (असुरक्षित) है, तो मैं उनसे कहूँगा कि वे भी मेरे साथ मिलकर कहें कि जो हुआ, सो अच्छा हुआ। इस ग़ैरमहफ़ूज़ चीज़ में ही हमारी हिफ़ाजत थी।

अगर हम सब ईश्वर के बच्चे हैं, और हैं, चाहे हम मानें या न मानें, तो हमारा फ़र्ज़ हो जाता है कि जो कुछ भी हो, उससे घबराहट में न पड़ें और उत्साह (जोश) और आत्म-विश्वास से (अपने पर भरोसा रखते हुए) अगले क़दम की तैयारी करें, चाहे वह क़दम कुछ भी हो। शर्त सिर्फ़ यह है कि हर एक पार्टी ईमानदारी के साथ सारे हिन्दुस्तान की भलाई की पूरी कोशिश करे, क्योंकि हमारी बाज़ी वही है, दूसरी नहीं।"

२२—सब से अच्छी दवाई रामनाम है

श्री फ्राइडमन ने महात्मा गांधी के पास नीचे दिये गये सन्देश को भेजा था। श्री फ्राइडमन को जनता ज़्यादातर श्री

भारतानन्द के नाम से जानती है। यद्यपि अपने इस सन्देश को उन्होंने बड़ा ही महत्वपूर्ण समझा था फिर भी महात्मा गांधी इस पर मोहित नहीं हुए थे क्योंकि इसका कोई विशेष प्रभाव महात्मा गांधी के विचारों पर नहीं पड़ा था। अपने सन्देश में भारतानन्द ने यह लिखा था—

"आप सत्य और अहिंसा पर इतना ज़ोर देते हैं, इसीलिए मैं आपकी तरफ़ इतनी दूर से खिंचा चला आया हूँ। लेकिन मैंने यह महसूस किया है कि अहिंसक बनने के लिए सिर्फ़ सत्य और अहिंसा की इच्छा (ख्वाहिश) काफ़ी नहीं। इसलिए मुझे लगा कि सिर्फ़ अहिंसा का प्रचार करना काफ़ी नहीं होगा। कोई ऐसा रास्ता चाहिए, जिससे लोग फिर नये सिरे से अपने आपको नई शकल में ढाल सकें।

सिर्फ़ अहिंसा के उसूल पर मोहित हो जाने और अहिंसक होने की इच्छा करने से आदमी सच्चा अहिंसक (अदमतशद्दुदवाला) नहीं बन सकता। हमारे मन की अनजानी तहें आसानी से अक्ल का कहना नहीं मानतीं और जब मन का जाना हुआ हिस्सा एक खयाल में डूब ही जाय, तो भी हो सकता है कि उसका अनजाने मन पर कुछ असर न हो। उस पर जल्दी से असर न होने के कारण हैं, हमारी छिपी ख्वाहिशें और डर, जो अपने से उलटे विचारों को बेदार (जाग्रत) होने नहीं देते। जब तक अनजाना मन साफ़ न किया जाय और छिपी रुकावटें हटाई न जायँ, तब तक मनुष्य का असली रूप, जो अक़्लमन्द और रहमदिल (दयालु) है, बाहर नहीं आ सकता।

इसलिए यह ज़रूरी है कि जो सच्चे दिल से अहिंसा की तलाश में है उनको बताया जाय कि किस तरह मन के अन्दर सत्य और अहिंसा के रास्ते में छिपी रुकावटों को दूर किया

जाय ताकि सत्य और अहिंसा दिल में अपने-आप टिकाऊ और असर-कारी रूप में जम जाँय।

प्रार्थना और उद्योग (दस्तकारी) वगैरह जैसी वाहरी चीज़ें सचाई और रहमदिलो को पाने का कोई अच्छा तरीक़ा नहीं। मनुष्य-जाति का सारा इतिहास (तवारीख) इस वात की गवाही देता है। ठीक दिशा (तरफ़) में कोशिश करने पर ही इन्सान अपने-आप को नये सिरे से ढाल सकता है। नेक इरादे ही काफ़ी नहीं नहीं, ठीक तरीक़ों की भी ज़रूरत होती है। खुशक़िस्मती से ऐसे तरीक़े मालूम हैं। आजमाकर देखा जा चुका है कि वे ठीक क़ाविल और मनुष्य के मन से हमरंग (एक रंगवाले हैं। वेशक, इन पर अमल वहुत कम करते हैं। मेरा मतलव साव-धानी के तरीक़े से है. जिसकी महात्मा वुद्ध ने वहुत तारीफ़ की है और कहा है कि कोई तरीक़ा इससे ज्यादा कारगर (काम आने वाला) नहीं। महात्मा वुद्ध वहुत सजीदा (गंभीर) और कम वोलनेवाले (मितभाषी) मनुष्य थे। फिर भी वे यहाँ तक कहते हैं कि इस तरीक़े से आदमी सात दिन में कमाल के दर्जे (सम्पूर्णता) तक पहुँच सकता है।

शायद आपने सावधानी के अमल (साधना) के वारे में न पढ़ा हो, इसलिए थोड़े में उसका हाल लिखता हूँ।

जो आदमी इस साधना को अपनाये, उसे चाहिए कि हमेशा चीज़ों को ध्यान से देखता रहे, आँख और कान खुले रक्खे, और अपने ख़यालों और जज़्वों (विचारों और भावनाओं) से अच्छी तरह वाक़िफ़ रहे। यह भी जाने कि उसका शरीर उन्हें किस तरह ज़ाहिर (प्रकट) करता है। मनुष्य को चाहिए कि वह छान वीन की आदत रक्खे, और जाग्रत और चौकन्ना रहे। लेकिन यह ज़रूरी है कि उसकी जानकारी पर उसके निजी ख़यालों और विचारों का रंग न चढ़े। उसे चाहिए कि वह अलग-अलग रहे,

न फैसला दे, न किसी को बुरा-भला कहे। सिर्फ सचेत रहे, और कुछ नहीं। अगर हम अपने साँस लेने को ध्यान से देखें, तो यह बात झट समझ में आ जायगी। क्योंकि इस क्रिया या अमल के साथ कोई इच्छाएँ और डर लगे हुए नहीं होते, इसलिए इसे बगैर लगाव के देख सकते हैं।

अगर एक मनुष्य लगातार इस चीज़ को बड़े ध्यान से देखने लग जाय कि उसका मन और उसके जज़्बात (भावनाएँ) किस तरह काम करते हैं और किस तरह वे शरीर (जिस्म) के ज़रिये ज़ाहिर होते हैं बड़ी जल्दी उसमें परिवर्तन (अन्दरूनी तब्दीली) होना शुरू हो जाता है। मन बिलकुल साफ और शफ्फाफ (पारदर्शक) हो जाता है; मानो बिलकुल खाली हो गया हो। यों, जाना मन साफ हुआ कि उसमें अनजाने मन की घुंडियाँ नज़र आने लगती हैं। आगाही की रोशनी में वे पिघल कर खत्म हो जाती है, और उनकी जगह अनजाने मन की और ज्यादा नीचे की, और, और भी पहुँच से बाहर की तहों को भरने और इस तरह खत्म होने का मौक़ा मिलता है।

अगर यह सारी क्रिया (अमल) ठीक ढंग से की जाय, तो इसमें कोई मेहनत नहीं पड़ती। बेहद ख़ुशी होती है और ऐसा लगता है, मानों सारे बन्धनों से छुटकारा मिल गया हो। दिन-ब-दिन आदमी ज्यादा अक्लमन्द और रहमदिल होता जाता है और उसकी अक्ल और रहम दिली कोई उसके अपने ऊपर ज़बर्दस्ती लादी हुई चीज नहीं होती, बल्कि खुद-ब-खुद फटती है। इसलिए ये खूबियाँ टिकाऊ होती हैं, क्योंकि मन की अन-जानी तह में कोई ऐसी चीज़ नहीं होती, जो इनके रास्ते में रुकावट डाले।

यह साबित करने के लिए कि अगले ज़माने के लोग सावधानी के तरीक़े से अच्छी तरह वाक़िफ थे, मैंने जान बूझकर

पच्छिम की और हिन्दुस्तान की मानी हुई किताबों के हवाले नहीं दिये। यह तरीका इतना सादा है, और इसकी खूबी इतनी आसानी से आदमी अपने-आप आज़मा सकता है कि इसको सनद की ज़रूरत नहीं। आप आसानी से इसको अपने ऊपर आज़मा सकते हैं। एक हफ़्ते में आपको यक़ीन हो जायगा कि महात्मा बुद्ध ने हमें अपने आपको नये ढंग से हमेशा के लिए सत्य रूप बनाने की गरज से एक ऐसा कारगर साधन दे दिया है, जिसकी कोई मिसाल नहीं।

जब तक हम व्यक्तिगतरूप या इनफिरादी हैसियत से सच्चे और अहिंसक न हो जायँ तब तक दुनिया में सत्य और अहिंसा की उम्मीद फ़जूल है। इसलिए यह निहायत ज़रूरी है कि हम ख़ुद सच्चे और अहिंसक बनें। इसके लिए एक ऐसा रास्ता है, जिसकी बड़ों ने तारीफ की है और जिसे बहुत लोगों ने आज़मा कर देख भी लिया है कि वह रास्ता कारगर, सीधा, सच्चा और सही है। आप दोस्तों की ऐसी छोटी-छोटी टुकड़ियों में इसे बार-बार आजमाइए, जो इस पर पूरे ध्यान से चलें और बाद में अपना-अपना तजरबा एक-दूसरे से मिलायें। नतीजे आप अपने-आप देख लेंगे। इसकी दुरुस्ती उतनी ही अच्छी तरह से जाँची जा सकती है जितनी कि एक सायन्स के प्रयोग की।

एक और पहलू भी देखने का है। आपको बहुत से ईमानदार और मुस्तैद (तत्पर) लोग मिले होंगे, जो इस बुनियाद पर झूठ और बेरहमी की हिमायत करते हैं कि उनसे काम ज्यादा अच्छा और जल्दी निकलता है। उनके तरीके नफ़रत और बेवकूफ़ी या दलील के रूप में होते हैं। अगर आप उनको सावधानी सिखा देंगे, तो वे इस नफ़रत और बेवकूफ़ी की जड़ें अपने-आप देख लेंगे। मूढ़ (कुन्द जिहन) और बेरहम आदमी को भी सावधानी का रास्ता अक़्लमन्द और रहमदिल बना देगा, क्योंकि वह मूढ़ता

(कुन्द-ज़िहनी और बेरहमी की जड़ ही काट देगा और वे हैं तृष्णा (ख्वाहिशें) और उससे पैदा हुए डर।

मेहरबानी करके इस सन्देश (पैग़ाम) की क़ीमत का फ़ैसला सन्देश लानेवाले की क़ीमत से न कीजिए। यह सन्देश बड़े भद्दे तरीक़े से आप तक पहुँचाया जा रहा है, फिर भी आपके काम के लिए बहुत अहमियत (महत्त्व) रखता है।"

इस सन्देश पर महात्मा गांधी ने केवल यही लिखा था. "ऊपर का सन्देश श्री फ्राइडमन ने लिखकर भेजा है, जिनको जनता ज़्यादातर श्री भारतानन्द के नाम से जानती है। जो भी इसकी क़ीमत हो, मैंने इसको नक़ल कर दिया है। मैं इस पर मोहित नहीं हो गया हूँ। बहुत-से दूसरे इलाजों की तरह इसने मुझ पर कोई ख़ास असर नहीं किया। अगर यह ७ दिन में हो जाने वाला काम है, तो क्या वजह है कि आज दुनिया में इसके इतने कम गवाह पाये जाते हैं? मदद के रूप में यह तरीक़ा आम इस्तेमाल होता है। और दूसरे इलाजों की तरह इसका भी अपना स्थान (जगह) है, चाहे इसको सावधानी कहो, जाग्रति कहो या ध्यान कहो। यह प्रार्थना, माला या दूसरी बाहरी साधना या तपस्या की जगह नहीं ले सकता, उनके साथ-साथ चल सकता है। अगर दिखावे के लिए न की जांय, तो इन साधनाओं की अपनी जगह है। असल में प्रार्थना तो सिर्फ़ भीतर की बात है।

जिन्होंने राम-नाम का तिलस्म ढूँढ़ पाया, वे सावधान तो थे ही। पर उन्होंने अनुभव (तजरबा) किया कि सत्य और अहिंसा पर अमल करने के लिए जितनी दवाइयाँ हैं, उनमें से सबसे अच्छी दवाई राम-नाम है।"

२३—अगर आपकी आत्मा मज़बूत है तो

आज़ाद हिन्द फ़ौज के एक कप्तान महात्मा गांधी से मिलने गये थे। जाते ही उन्होंने कहा. "हमें एक मौक़ा दीजिए। अब हम क्या करें ? आप हमसे क्या उम्मीद रखते हैं ?

उन्हें जवाब देते हुए महात्मा गांधी ने कहा, "आप लोगों ने लड़ाई के मैदान में जो हिम्मत और बहादुरी दिखाई, वही अब यहाँ दिखाइए। आज़ाद हिन्द फौज के लोगों में पूरा-पूरा इत्तहाद या एका था। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, सभी कौम के लोग सगे भाई की तरह रहते थे। आप में न कोई ऊँचा था और न कोई नीचा। कोई अछूत भी न था। एकता की इस भावना को आप यहाँ भी बरत कर दिखाइए, जोकि मुझे डर है कि यहाँ आप इसमें कामयाब नहीं होंगे।"

इस बात को मानते हुए आज़ाद हिन्द फ़ौजवाले ने कहा, "जी हाँ, आप सच कहते हैं। जब तक यहाँ ब्रिटिशों की हुकूमत मौजूद है, तक हम लोग एक नहीं हो सकते।"

इस पर उन्हें समझाते हुए महात्मा-गांधी ने कहा, "सो सच है, लेकिन ब्रिटिश हुकूमत के मौजूद होते हुए भी यहाँ उसे छोड़कर बहुत से ऐसे काम हैं जो करने लायक़ हैं। मैं अपनी राज़ी ख़ुशी से भंगी बना हूँ। इससे मुझे कौन रोक सकता है ? शाहनवाज पहले हिन्दुस्तानी हैं और आखिर में भी हिन्दुस्तानी हैं। उनके दिल में यह ख़याल ही नहीं है कि वे किसी ख़ास क़ौम के हैं। इस तरह अपने हिंदुस्तानी होने का ख़याल रखने से उन्हें कौन रोक सकता है ? हक़ीक़त यह है कि वे जहाँ-जहाँ जाते हैं, वहाँ अपने हिन्दू दोस्तों के घर ही ठहरते हैं। फिर भी वे इस

बात को समझ गये हैं कि हिन्दुस्तान के बाहर उन्होंने जो कामयाबी हासिल की थी, वह यहाँ आसानी से नहीं मिल सकेगी। आज़ाद हिन्द फ़ौज के लोग वापस अपने घर पहुँचने के बाद अपने आसपास की हवा से प्रभावित हो जाते हैं और बाहर जो कुछ सीखे थे, उसे भूल जाते हैं। ऐसी हालत में उनके विचारों और भावनाओं यानी खयालों और जज्बों को पुराने ढर्रे पर चढ़ने से रोकने का काम मुश्किल है।

इसके साथ ही आपका यह उम्मीद रखना भी मुनासिब न होगा कि हिन्दुस्तान आप पर लाखों रुपया खर्च करे। आपको इटली के सरदार गैरी बाल्डी के सिपाहियों की तरह बनना होगा। गैरी बाल्डी ने उनसे कहा था, "मेरे पास आपको देने के लिए और कुछ नहीं, सिर्फ़, आँसू और मजदूरी है।" जब लड़ाई के मैदान में लड़ने का काम न होता, तब वे सिपाही अपनी खेती-बारी करके अपना गुजारा किया करते थे। उन्हें कोई तनख़ाह नहीं देता था उड़ाऊ बनकर पानी की तरह पैसा बहाने वाले ब्रिटिश लोगों ने आपको तालीम दी है। अगर आपने यह उम्मीद रक्खी होगी कि आपको ब्रिटिश हुकूमत की तरह हिन्दुस्तान वाले भी विक्टोरिया क्रास एक तरह का बिल्ला जो फौजी-लोगों को बहादुरी के खास काम करने पर दिया जाता है और जिसके साथ बिल्ला पाने वाले को जिन्दगी भर के लिए साल भर का खर्च हर साल दिया जाता है) या ऐसे ही दूसरे इनाम देंगे, तो वह बेकार होगी। हिन्दुस्तान के करोड़ों भूखों मरने वाले लोगों के बस की यह बात नहीं। आपको उनके साथ एक होकर उनकी सेवा करनी होगी। आज एक मामूली हिन्दुस्तानी फौजी आदमी को देखकर काँप उठता। फौजी आदमी गुण्डों का-सा बर्ताव करता है और उसकी मनमानी के खिलाफ़ कहीं कोई इन्साफ़ नहीं मिलता। आपको अपने बर्ताव से यह साबित कर देना है

कि आप उनके दोस्त हैं और उनकी सेवा करने वाले हैं, जिससे वे आपका डर न रक्खें।"

आज़ाद हिन्द फौज के कप्तान ने बीच ही में कहा, "जिस तरह हम हिन्दुस्तान के बाहर आम लोगों के साथ दोस्ती रखते थे और उनकी मदद करते थे, उसी तरह यहाँ भी करते हैं"।

इस पर महात्मा गांधी ने कहा, "यह अच्छी बात है। लेकिन मुझे आप से यह कहना चाहिए कि आज़ाद हिन्द फौज के लोगों को क़ाबू में रखने का काम आपके बड़े अफ़सरों को मुश्किल मालूम होने लगा है। आप लोगों में आपस-आपस की निकम्मी होड़ाहोड़ी और हलकी ईर्ष्या या जलन पैदा होने लगी है। यह खयाल जोर पकड़ने लगा है कि 'उसे फलाँ चीज मिली और मुझे क्यों नहीं?' जब आप परदेस म थे, तब हालत कुछ और थी। वहाँ आपके समर्थ नेता जी बोस आपकी पीठ पर थे। हम दोनों में गहरी ना-इत्तफाकी थी, फिर भी उनकी जलती हुई देशभक्ति, उनकी हिम्मत और सूझ और नये-नये साधन खड़े कर लेने की उनकी ताकत पर मैं आशिक था।"

आज़ाद हिन्द फौज के कप्तान ने फिर कहा, "आपके लिए उनके दिल में जो गहरी मुहब्बत और इज्जत थी, उसका खयाल आपको नहीं आ सकता।" इसके बाद उन्होंने फिर पूछा, "आज़ादी के लिए आगे जो लड़ाई छिड़ेगी, उसमें हम लोग किस तरह अपना हिस्सा अदा करें"।

उन्हें जवाब देते हुए महात्मा गांधी ने कहा, "आज़ादी की लड़ाई आज भी चल रही है। वह कभी रुकी नहीं। लेकिन जब तक मेरी चलेगी, तब तक वह अहिंसक रहेगी। पिछले २५ बरसों में आम लोगों ने अहिंसा की तालीम को ठीक-ठीक हजम किया है। लोग अब यह समझ चुके हैं कि अहिंसा के हथियार से बच्चे औरतें, और अपाहिज बूढ़े भी बड़ी से-बड़ी ताकतवाली सर-

कार का सामना कामयाबी के साथ कर सकते हैं। अगर आपकी आत्मा या आपकी भावना मजबूत है, तो अकेले शरीर की ताक़त की कमी से कोई मुश्किल पेश नहीं होती। इसके खिलाफ़ मैंने देखा है कि दक्षिण अफ्रीका में भीम-जैसे डील-डौलवाले जुलू लोग एक गोरे बच्चे से डरकर थरथर कांप उठते थे। गोरे सिपाही जुलू लोगों की झोपड़ियोंवाली बस्तियों में घुस जाते थे और औरतों मर्दों और बच्चों को बिछौने में सोई हुई हालत में ही मार डालते थे। जबर्दस्त डीलडौल वाले जुलू में भी ऐसे मौके पर सामना करने की ताकत नहीं रहती थी और उसके शरीर की ताक़त से उसकी आत्मा की या बदला लेने की भावना की दृढ़ता की खामी पूरी नहीं होती थी।"

२४—चोरों के लिए .कुदरती इलाज

यह उस दिन का प्रसंग है जिस दिन लोकमान्य तिलक की २५ वीं बरसी थी। इस बरसी ने पुरानी यादों को बहुत जोर से जगा दिया था। शाम की प्रार्थना के बाद महात्मा गांधी ने बताया था कि किस तरह टेलीफोन से इस दुःखद संवाद को सुनकर वे लोकमान्य की श्मशान यात्रा में हाजिर रहने के लिए पहुँचे थे। श्मशान-यात्रा के जबर्दस्त जुलूस में जितने हिन्दू थे, उतने ही मुसलमान और पारसी भी थे, उस जबर्दस्त भीड़ की धक्का-धुक्की में महात्मा गांधी .खुद ही फँस गये थे और बड़ी मुश्किल से उसमें से निकल पाये थे। उन दिनों हमारे देश का वातावरण क़ौमी कड़वाहट के खयालों से जहरीला नहीं

बना था। उसके बाद तो बहुत-सी घटनाएँ घट गईं, लेकिन लोकमान्य की याद और लोगों के दिल में उनकी मुहब्बत ज्यों की त्यों ताज़ी बनी रही। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है वैसे-वैसे उनकी लोकप्रियता उलटी बढ़ती जाती है। लोकमान्य का शरीर नष्ट हो चुका है, लेकिन वे तो अब भी हमारे साथ ही हैं। 'स्व-राज्य हमारा जन्मसिद्ध हक है' यह मंत्र उन्होंने ही हमको दिया है। वह सबका समान रूप से जन्मसिद्ध हक है। जिस तरह पूरे में से पूरा ले लेने से पूरा बाकी रहता है, उसी तरह वह अखूट है। उसे बांटने से भी वह कम नहीं होता। इस प्रकार के विचार प्रकट करते हुए महात्मा गाँधी ने कहा था,

"सच है कि आज लोकमान्य के नाम से मनमाने काम किये जाते हैं। यह दुनिया का रिवाज है। दैवी वस्तु का दुरुपयोग कहाँ नहीं होता ? मगर बुराई तो बुरा करनेवाले के पास ही रहती है। उससे दैवी वस्तु का ओजस या तेज कम नहीं होता !"

इसके बाद महात्मा गाँधी ने कहा था कि हिन्दुस्तान अपने इस जन्म सिद्ध हक को अनकरीब ही हासिल करने वाला है। ऐसा कहकर उन्होंने यह भी कहा था, "मेरी राय में मेरी कल्पना का स्वराज्य क़ायम करने के लिए कुदरती इलाज एक महत्व की चीज़ है। स्वराज हासिल करने से पहले हमें अपनी तीन तरह की यानी शरीर की, मन की और आत्मा की शुद्धि कर लेनी चाहिए"।

ऊपर की बात कहते हुए महात्मा गांधी ने शायद ही यह सोचा होगा कि २४ घंटे के अन्दर ही उन्हें इस उसूल पर अमल करने का मौक़ा मिल जायगा। दूसरे ही दिन एक देहाती भाई महात्मा गांधी के सामने लाये गये। उनके घर में

चोरी हो गई थी और चोर जेवर वगैरह चुराकर ले गये थे। चोरों ने इन भाई को कुछ चोट भीपहुँचाई थी। महात्मा गांधी ने लोगों से कहा था कि इसके तीन रास्ते या इलाज हो सकते हैं।

पहला इलाज यह है कि पीढ़ियों पुराने रिवाज के मुताबिक पुलिस को इसकी खबर दी जाय। अक्सर होता यह है कि इसकी वजह से पुलिस को रिश्वत लेने का एक और मौका मिल जाता है, लेकिन जिसके घर चोरी हुई होती है, उसे तो इससे कोई राहत नहीं मिलती।

दूसरा रास्ता हाथ-पर-हाथ धरकर बैठने और जो हुआ है उसे सह लेने का है। आम तौर पर गाँववाले इसी का इस्तेमाल करते हैं। यह चीज़ निन्दनीय है, क्योंकि इसकी जड़ में डर-पोकपन रहा है। जब तक कायरता रहेगी, तब तक जुर्म फूलते-फलते ही रहेंगे। इससे भी बुरी बात तो यह है कि इस तरह हाथ-पर-हाथ धर कर बैठे रहने से हम ख़ुद भी इस जुर्म के तरफ़दार बनते हैं।

तीसरा इलाज या रास्ता शुद्ध सत्याग्रह का है, और मैं आप से इसकी सिफ़ारिश करता हूँ। इससे यह समझ लेना ज़रूरी है कि हम चोरों और गुनहगारों को भी अपने भाई-बहन की तरह मानें और समझें कि गुनाह भी उनको लगा हुआ एक मर्ज़ या रोग ही है और हमें उनका यह मर्ज़ मिटाना है।

चोरों या गुनहगारो पर नाराज होने और उन्हें सजा दिलाने की कोशिश करने के बदले आपको यह समझने की कोशिश करनी चाहिए कि किन कारणों से वे गुनाह या जुर्म करने के लिए आमादा हुए? मसलन, आपको चाहिए कि आप उन्हें कोई रोज़गार-धन्धा सिखा दें और उनके लिए ईमानदारी के साथ

अपनी रोज़ी कमाने के ज़रिये मुहैया कर दें। और. इस तरह उनके जीवन को बदलने की कोशिश करें।

आपको समझना चाहिए कि चोर या गुनहगार आपसे अलग किसी और किस्म का प्राणी नहीं होता। असलियत यह है कि अगर आप अपने दिल को अन्दर से टटोलें और अपनी आत्मा की बारीकी के साथ जांच करें, तो आपको मालूम होगा कि आपके और उनके बीच फ़र्क सिर्फ कम या ज़्यादा मिक़दार का ही है। दूसरों का ख़ून चूस कर या इसी तरह के दूसरे जरियों से अमीर बने हुए मालदार लोग गिरहकटों, सेंध लगाकर चोरी करने वाले चोरों के मुकाबले लूट खसोट के मामले में कुछ कम गुनहगार नहीं होते। फर्क यही है कि अमीर या मालदार लोग अपनी इज्ज़त की आड़ में रहकर क़ानूनी सजाओं से बच निकलते हैं।

इस तरह के विचारों को समझाते हुए महात्मा गांधी ने यह भी कहा था, "सच तो यह है कि अपनी ज़रूरत से ज्यादा धन या दौलत इकट्ठा करना चोरी है। अगर दौलत का समझ-दारी भरा इन्तजाम किया जाय और पूरी तरह न्याय या इन्साफ़ की नींव पर समाज की इमारत खड़ी की जाय तो चोरी का कोई मौक़ा ही पेश न आये और समाज में कोई चोर पैदा ही न हो।

मेरी कल्पना के स्वराज्य में चोर या गुनहगार न होंगे। अगर हुए, तो वह स्वराज नाम का ही स्वराज होगा। गुनहगारी एक समाजी बीमारी की निशानी है। मेरी कल्पना के क़ुदरती इलाज में शरीर, मन और आत्मा के तिहरे रोगों को मिटाने के इलाज शामिल हैं। इसलिए आप लोगों को सिर्फ़ शरीर की बीमारियां दूर करके ही सन्तोष नहीं मानना चाहिए। आपके काम में मन और आत्मा की बीमारियों को मिटाने का काम भी

शामिल होना चाहिए, जिससे आपके अन्दर पूरी-पूरी सामाजिक शान्ति कायम हो सके।

गुनहगारों के साथ पेश आने के लिए क़ुदरती इलाज का यानी सत्याग्रह का जो तरीका मैंने सुझाया है, उसे आप अपनाएँ, तो आप किसी जुर्म या गुनाह के खिलाफ हाथ-पैर जोड़कर चुपचाप बैठ ही न सकें। अकेला एक पूर्ण पुरुष ही अपने-आप में डूब कर जी सकता है और दुनिया की तमाम फिकरों और ज़िम्मेदारियों से पूरी तरह दूर रह सकता है। लेकिन इस तरह की पूर्णता का दावा कौन कर सकता है? तजरबेकार खेवनहार और मल्लाह बीच समन्दर में एकाएक दीख पड़नेवाली शांति को फिकर की नजर से देखते हैं, क्योंकि पूरी-पूरी शांति या खामोशी समन्दर की अपनी असली तासीर नहीं। जीवन के समन्दर का भी यही हाल है। अक्सर उसमें आने वाले तूफान की आगाही रहती है।

इसलिए सत्याग्रही न तो किसी तरह का वैर भँजायेगा और न गुनहगार के तावे होगा। बल्कि वह तो अपने को सुधारकर गुनहगार को भी सुधारेगा। वह एक ही वक्त में दो घोड़ों पर सवार नहीं होगा, यानी एक तरफ सत्याग्रह के क़ानून पर अमल करने का ढोंग और साथ ही पुलिस की मदद लेने का काम वह नहीं करेगा। पहली चीज पर अमल करने के लिए उसको दूसरी चीज का त्याग करना होगा। यह दूसरी बात है कि गुनहगार खुद ही अपने को पुलिस के हवाले करना पसन्द करे। अगर उसी वक्त आप भी पुलिस के पास जाने और उसके खिलाफ रिपोर्ट करने को तैयार हो जाँय, तो आपको उसके दिल को छूने की और उसका विश्वास पाने की उम्मीद न रखनी चाहिए। यह तो बड़ी-से-बड़ी दगाबाजी हुई। सुधारक कभी रिपोर्टर या ख़ुफिया बनकर अपना काम नहीं कर सकता।

अपने सामने गुनाह क़बूल करनेवाले आदमी के खिलाफ़ गवाही देने के लिए कोई भी पुलिस अफ़सर सत्याग्रही को मजबूर नहीं कर सकता। सत्याग्रही किसी भी हालत में विश्वासघात या दगाबाज़ी का जुर्म नहीं करता।"

२५—फिर रामनाम

किसी एक सज्जन ने अपने किसी मित्र को लिखा, "वह (महात्मा गांधी) हिन्दुस्तान-प्रेमी हैं। पर यह बात समझ में नहीं आती कि हर रोज खुले में प्रार्थना करके और 'राम-नाम' (राम से मतलब हिन्दू देवता) की धुन लगाकर अपने मुल्क के दूसरे मजहबवालों का दिल वे क्यों दुखाते हैं? उन्हें यह समझना चाहिए कि हिन्दुस्तान में बहुत-से मजहब हैं और अगर वह जनता (आवाम) में हिन्दू देवताओं का हवाला देकर बोलेंगे, तो पुराने खयाल के लोगों को ग़लतफहमी होगी। और मुस्लिम लीग की यह भी शिकायत है—रामराज (राम का राज्य) कायम करना उनका एक प्रिय जुमला है। एक सच्चे मुसलमान को यह कैसा लगेगा?

इसी को उन सज्जन ने महात्मा गांधी के पास भेज दिया था और साथ ही साथ जवाब भी माँगा था। जवाब देते हुए महात्मा गांधी ने कहा; "हजारवीं दफ़ा फिर दुहराना पड़ता है कि राम-नाम परमात्मा के कई नामों में से एक है। उसी प्रार्थना में कुरानशरीफ़ की आयतें और ज़िन्द अवस्ता के श्लोक भी गाये जाते हैं। सच्चे मुसलमानों ने तो, क्योंकि वे सच्चे हैं,

रामनाम लेने को कभी बुरा नहीं माना। रामनाम कोई फ़जूल रट नहीं है। मेरे और लाखों हिन्दुओं के नज़दीक तो यह सर्वव्यापी (हर जगह मौजूद) परमात्मा को पुकारने का एक ढंग बनाया गया है। राम के पीछे जो 'नाम' है वह सब से ज्यादा महत्त्व (अहमियत) का हिस्सा है। उसका मतलब है, ऐतिहासिक राम के बिना नाम। कुछ भी हो, मेरे इस खुल्लमखुल्ला कहने से कि मैं इस धरम का हूँ, किसी को दुःख क्यों? खासकर मुस्लिम लोग को? इन सभाओं में आने के लिए किसी को मजबूर नहीं किया जाता और अगर कोई आ भी गया तो लाजिमी (अनिवार्य) नहीं कि वह रामधुन में शामिल हो। आने वालों से तो सिर्फ यही आशा की जाती है कि वे प्रार्थना की शान्ति भंग न करें और अगर उसके किसी हिस्से में वे नहीं भी मानते, तो भी उसे बर्दाश्त करें।

'रामराज' के जुमले के बारे में—मैं इसका मतलब कई दफा बता चुका हूँ उसके बाद किसी को इसके इस्तेमाल से दुःख नहीं होना चाहिए। यह एक आसान और मतलब से भरा जुमला है और इसका मतलब दूसरा कोई भी जुमला करोड़ों को नहीं समझा सकता। जब मैं सरहद्दी सूबा (सीमा-प्रान्त) में जाता हूँ और मेरे सुननेवाले ज्यादा मुसलमान होते हैं, तो मैं इसे ख़ुदाई राज कहता हूँ। ईसाई सुनने वाले हों मैं उसे दुनिया में गाद की हुकूमत कहूँगा। अगर मैं कोई और तरीका अख्तियार करूँ, तो वह अपने-आप को दबाना होगा और धोखेबाजी होगी।"

ठीक इसी प्रकार एक दूसरे सज्जन ने महात्मा गांधी से लिख कर प्रश्न किया था, "आप कहते हैं कि नियम (कानून) यह होना चाहिए कि प्रार्थना के वक्त हर एक आदमी आँखें बन्द करके बैठे और ईश्वर के सिवा दूसरी किसी चीज़ का ख़याल न

करे। लेकिन सवाल यह पैदा होता है कि हम किस तरह और किस शक्ल में ईश्वर का ध्यान करें ?"

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने समझाया था, "ध्यान करने का सच्चा रास्ता यह है कि हम अपनी भक्ति के विषय को छोड़कर बाकी सब ओर से मन की आँखों और कानों को खींच लें। इसलिए प्रार्थना के दर्मियान आँखें बंद कर लेने से हमें इस तरह के ध्यान में मदद मिलेगी। कुदरती तौर से ईश्वर के बारे में इन्सान के खयाल की कोई हद होती है। इसलिए हर एक आदमी को ईश्वर का उसी शकल में ध्यान करना चाहिए, जो उसे सबसे ज्यादा रुचे, बशर्ते कि वह ख़याल पाक (पवित्र) और ऊँचा उठाने वाला हो।

२६—ईश्वर व्यक्ति है या ताक़त ?

बड़ोदा से किसी सज्जन ने महात्मा गांधी के पास पत्र लिखकर प्रश्न किया था, "आप हमें भगवान् से यह प्रार्थना करने के लिए कहते हैं कि वह दक्षिण अफ्रीका के गोरों को अच्छी अकल दे और वहाँ के हिन्दुस्तानियों को अपने मक़सद पर डटे रहने की हिम्मत और ताक़त दे। इस तरह की प्रार्थना तो किसी शख्स से ही की जा सकती है। अगर भगवान् सब जगह मौजूद रहने वाला और सबसे बड़ी ताक़त है, तो उससे प्रार्थना करने से क्या फ़ायदा ? वह तो अपना काम करता ही रहता है।"

इसका उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने कहा था, "इस मज़मून पर मैं पहले लिख चुका हूँ। लेकिन किसी-न-किसी भाषा में यह सवाल बारबार दुहराया जाता है। इसलिए इसको और

ज्यादा समझाने से, मुमकिन है किसी को मदद मिले। मेरे विचार से राम, रहमान अहुरमज्द, ईश्वर या कृष्ण ये सब इन्सान के रखे हुए उसी एक ताक़त के नाम हैं, जो सब से बड़ी ताक़त है।

अधूरा होते हुए भी आदमी पूर्णता के लिए लगातार कोशिश करे, यह उसके लिए क़ुदरती बात है। इस कोशिश में वह ख़याली पुलाव भी पकाने लगता है। और, जिस तरह एक बच्चा उठने की कोशिश करता है, बारबार गिरता है और आख़िरकार चलना सीख जाता है, उसी तरह आदमी अपनी समूची अक़ल के बावजूद, अनादि (जिसकी शुरुआत नहीं है) और अनन्त (जिसका ख़ातमा नहीं है) ईश्वर के मुक़ाबले एक बच्चा ही है। ऊपर से यह बात बे सिरपैर की लगे, लेकिन दरसल वह बिलकुल सच है।

आदमी अपनी टूटी फूटी भाषा में ही ईश्वर का बखान कर सकता है। सच पूछा जाय तो उस ताक़त का जिसे हम ईश्वर कहते हैं, बखान नहीं किया जा सकता। न ही उस ताक़त को आदमी से अपना बखान कराने की कोई ज़रूरत है। आदमी को कोई ऐसा साधन चाहिए, जिससे वह समन्दर से भी बड़ी उस ताक़त का बखान कर सके। अगर यह दलील ठीक है, तो यह पूछना जरूरी नहीं कि हम उसकी प्रार्थना क्यों करें ? आदमी अपनी बुद्धि के दायरे में ही ईश्वर की कल्पना कर सकता है। अगर ईश्वर समन्दर के मानिन्द बड़ा और बेहद है, तो आदमी-जैसी एक छोटी-सी बूँद उसकी कल्पना कैसे कर सकती है ? समन्दर में डूब कर ही आदमी समन्दर की जान-कारी पा सकता है। लेकिन यह तजरबा बयान के बाहर की बात है।

मडम ब्लावाट्स्की की भाषा में प्रार्थना में आदमी अपनी महान् शक्ति की ही पूजा करता है। सच्ची प्रार्थना वही कर सकता है, जिसे यह विश्वास हो कि ईश्वर उसके भीतर मौजूद है। जिसे यह विश्वास नहीं, उसे प्रार्थना करने की जरूरत नहीं। भगवान् उससे नाराज न होगा। लेकिन मैं अपने ज़ाती तजरबे से यह कह सकता हूँ कि जो प्रार्थना नहीं करता, वह नुक़सान में रहता है। तब फिर यह तो सवाल ही नहीं उठता कि एक आदमी ईश्वर को व्यक्ति (फ़र्द) मानकर उसकी पूजा करता है और दूसरा उसे शक्ति(ताक़त) मानकर पूजता है। दोनों अपनी अपनी निगाह से ठीक ही करते हैं।

यह कोई नहीं जानता, शायद कभी जान भी न सके, कि प्रार्थना करने का सबसे अच्छा तरीक़ा क्या है? आदर्श हमेशा आदर्श ही बना रहेगा। हमें सिर्फ़ यही याद रखना चाहिए कि ईश्वर सारी ताक़तों की एक ताक़त है। दूसरी सब ताक़तें जड़ हैं। लेकिन ईश्वर एक जीती-जागती ताक़त या स्प्रिट है जो सब जगह मौजूद है, सब को अपने में समाये है और इसलिए आदमी की समझ से परे है।"

२७–रामनाम के बारे में भ्रम

शंका उपस्थित करते हुए किसी सज्जन ने महात्मा गाँधी को लिखा था, "आपने राम-नाम से मलेरिया का इलाज सुझाया है। मेरी मुश्किल यह है कि जिस्मानी बीमारियों के लिए रूहानी ताक़त पर भरोसा करना मेरी समझ से बाहर है। मैं पक्की

तरह से यह भी नहीं जानता कि आया मुझे अच्छा होने का हक भी है या नहीं। और क्या ऐसे वक्त, जब मेरे देश वाले इतने दुःख में पड़े हैं, मेरा अपनी मुक्ति के लिए प्रार्थना करना ठीक होगा? जिस दिन मैं राम-नाम समझ जाऊँगा, उस दिन मैं उनकी मुक्ति के लिए प्रार्थना करूँगा, नहीं तो मैं अपने-आपको आज से ज्यादा खुदगरज़ महसूस करूँगा।"

इस शंका का समाधान करते हुए महात्मा गांधी ने इस प्रकार के विचार प्रकट किये थे. "मैं मानता हूँ कि यह दोस्त सत्य के सच्चे तलाश करने वाले हैं। उनकी इस मुश्किल की खुल्लमखुल्ला चर्चा मैंने इसलिए की है कि उन जैसे बहुतों की मुश्किलें इसी किस्म की हैं।

दूसरी ताकतों की तरह रूहानी ताकत भी मनुष्य की सेवा के लिए है। सदियों से थोड़ी-बहुत सफलता के साथ शारीरिक (जिस्मानी) रोगों को ठीक करने के लिए उसका उपयोग होता रहा है। इस बात को छोड़ भी दें, तो भी अगर जिस्मानी बीमारियों के इलाज के लिए कामयाबी के साथ उसका इस्तेमाल हो सकता हो, तो उसका उपयोग न करना सख्त गलती है। क्योंकि आदमी माद्दा भी है और रूह भी। और, इन दोनों का एक-दूसरे पर असर होता है।

अगर आप मलेरिया से बचने के लिए कुनैन लेते हैं और इस बात का खयाल भी नहीं करते कि करोड़ों को कुनैन नहीं मिलती तो आप उस इलाज से क्यों इनकार करते हैं, जो आपके अंदर है? क्या सिर्फ इसलिए कि करोड़ों अपनी जहालत की वजह से उसका इस्तेमाल नहीं करते? अगर करोड़ों अनजान हों, या हो सकता है, जान-बूझकर भी गन्दे रहें, तो गन्दा और बीमार रहकर आप उन्हीं करोड़ों की सेवा का फ़र्ज भी अपने ऊपर नहीं ले सकेंगे और यह बात तो पक्की है कि आत्मा का रोगी या गन्दा होना

(उसे अच्छी और साफ रखने से इनकार करना) बीमार और गन्दा शरीर रखने से भी बुरा है।

मुक्त का अर्थ यही है कि आदमी हर तरह से अच्छा रहे। फिर आप अच्छे क्यों न रहें। अगर अच्छे रहेंगे, तो दूसरों को अच्छा रहने का रास्ता दिखा सकेंगे, और इससे भी बढ़कर अच्छा होने के कारण आप दूसरों की सेवा कर सकेंगे। लेकिन अगर आप अच्छे होने के लिए पेनिसिलिन लेते हैं, हालाँ कि आप जानते हैं कि दूसरों को वह नहीं मिल सकती, तो ज़रूर आप सरासर खुदगरज़ बनते हैं।

मुझे खत लिखनेवाले इन दोस्त की दलील में जो गड़बड़ी है, वह साफ़ है। हाँ, यह ज़रूर है कि कुनैन की गोली या गोलियाँ खा लेना राम-नाम के उपयोग के ज्ञान को पाने से ज्यादा आसान है। कुनैन की गोलियाँ खरीदने की कीमत से इसमें कहीं ज़्यादा मेहनत पड़ती है। लेकिन यह मेहनत उन करोड़ों के लिए उठानी चाहिए, जिनके नाम पर और जिनके लिए लेखक राम नाम को अपने हृदय से बाहर रखा चाहते हैं।"

———

२८—सम्मिलित प्रार्थना

"क्या आप सम्मिलित प्रार्थना में मानते हैं? आजकल जैसी सम्मिलित प्रार्थना की जाती है, क्या वह सच्ची प्रार्थना है? मैं समझता हूँ कि वह नीचे गिरानेवाली चीज है, और इसलिए ख़तरनाक है। हजरत मसीह ने कहा है—"जब तुम प्रार्थना करो, तो पाखंडियों की तरह न करो, है बल्कि अपने कमरे में

किवाड़ बन्द करके और छिपकर अपने पिता के आगे प्रार्थना करो।' भीड़ में लोग ज्यादातर बेध्यान रहते हैं और मनको स्थिर नहीं कर पाते। उस हालत में प्रार्थना पाखण्ड बन जाती है। योगी इसे ख़ूब जानता है। तो क्या जनता को अन्तर्मुख होने यानी अपने अन्दर नजर डालने की तालीम नहीं दी जानी चाहिए? सच्ची प्रार्थना तो वही है।"

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने कहा था, "मेरा मत है कि मैं जो सामुहिक या मजमूई प्रार्थना कराता हूँ, वह जन-समूह के लिए सच्ची प्रार्थना है। उसका संचालक आस्तिक है, पाखण्डी नहीं। अगर वह पाखण्डी होता, तो प्रार्थना शुरू से ही अपवित्र हो जाती। जो स्त्री-पुरुष उसमें शामिल होते हैं, वे किसी पुरानी रीति के प्रार्थना-मन्दिर में नहीं जाते, जहाँ उन्हें कोई सांसारिक लाभ हो।

उनमें ज्यादातर ऐसे होते हैं, जिनका प्रार्थना के संचालन के साथ कोई जाती या निजी सम्बन्ध नहीं। इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि वे दिखावे के लिए नहीं आते। चूँकि वे मानते हैं कि सामुहिक प्रार्थना से उन्हें किसी-न-किसी तरह का पुण्य मिलता है, इसीलिए वे उसमें आते हैं। यह बिलकुल सच है कि कुछ लोग शायद ज्यादातर लोग, प्रार्थना में ध्यान नहीं देते, या मन को स्थिर नहीं कर पाते। इसका मतलब यही है कि वे अनाड़ी हैं। मन को स्थिर या एकाग्र न कर सकना, या ध्यान न लगा सकना, असत्य या पाखण्ड नहीं। अगर वे ध्यान न धरते हुए भी यह दिखाने की कोशिश करें कि वे ध्यान धर रहे हैं, तो उनपर पाखण्ड का इलजाम लग सकता है। लेकिन इसके खिलाफ़ बहुतों ने मुझसे पूछा है कि जब वे अपना चित्त स्थिर न कर सकें, तो क्या करें?

ऊपर के सवाल में हजरत मसीह का जो फ़िक़रा दिया है

वह यहाँ लागू नहीं होता। हज़रत मसीह उन लोगों का ज़िक्र कर रहे थे, जो दिखावे के लिए प्रार्थना करने का ढोंग रचते थे। उनके उस वचन में सामुहिक प्रार्थना के विरुद्ध कुछ भी नहीं कहा गया है। मैं कई दफ़ा कह चुका हूँ कि ज़ाती प्रार्थना के बिना आम प्रार्थना का लाभ बरायनाम ही होता है। मेरा विश्वास है कि व्यक्तिगत या ज़ाती प्रार्थना सामुहिक यानी आम प्रार्थना की तैयारी है। इसलिए सामुहिक प्रार्थना तभी सफल मानी जानी चाहिए, जब वह हरएक को अपने तौर पर प्रार्थना करना सिखाये। दूसरे शब्दों में जब इन्सान दिल से प्रार्थना करना सीख जाता है, तो फिर वह अकेले में प्रार्थना करे या दूसरों के साथ मिलकर करे, हमेशा सच्चे दिल से प्रार्थना करता है।

मैं नहीं जानता कि इन भाई ने जिस योगी का जिक्र किया है, वह क्या करता है, और क्या नहीं करता। लेकिन इतना मैं जानता हूँ कि जब जनता परमात्मा के साथ एकतार हो जाती है, तो वह खुद-ब-खुद अपने भीतर नजर डालने लगती है। यह सब प्रार्थनाओं का नतीजा होना चाहिए।

२६—दशरथ-नन्दन-राम

किसी एक आर्य-समाजी महाशय ने महात्मा-गांधी से लिख कर प्रश्न किया था, "जिन अविनाशी राम को आप ईश्वर स्वरूप मानते हैं, वे दशरथ-नन्दन सीता-पति राम कैसे हो सकते हैं? इस दुविधा का मारा मैं आपकी प्रार्थना में बैठता तो हूँ लेकिन

रामधुन में हिस्सा नहीं लेता। यह मुझे चुभता है। क्योंकि आपका कहना तो यह है कि सब हिस्सा लें, और यह ठीक भी है। तो क्या आप ऐसा कुछ नहीं कर सकते, जिससे सब हिस्सा ले सकें।"

इस प्रसंग में "एक आर्य-समाजी महाशय" स्पष्ट रूप से लिखा गया है। अभिप्राय यह है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने 'सत्यार्थ प्रकाश' नामक धार्मिक ग्रन्थ में जिस वैदिक धर्म की श्रेष्ठता सिद्ध की है उसी को ही आर्य-समाजी सत्य मानते हैं, और उसी के अनुसार चलते भी हैं। 'रामनाम' के सम्बन्ध उसी सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में इस प्रकार लिखा हुआ है—"थोड़े दिन हुए कि एक 'राम स्नेही' मत शाहपुरा से चला है। उन्होंने सब वेदोक्त धर्म को छोड़ के 'राम नाम' पुकारना अच्छा माना है। उसी में ज्ञान, ध्यान मुक्ति मानते हैं। परंतु जब भूख लगती है तब 'रामनाम' में से रोटी-शाक नहीं निकलता क्योंकि खान-पान आदि तो गृहस्थों के घर ही में मिलते हैं। वे भी मूर्ति पूजा को धिक्कारते हैं परन्तु आप स्वयं मूर्ति बन रहे हैं। स्त्रियों के संग में बहुत रहते हैं क्योंकि राम जी को 'राम की' के बिना आनंद ही नहीं मिल सकता।

अब थोड़ा-सा विशेष राम स्नेही के मत विषय में लिखते हैं—एक रामचरण नामक साधु हुआ है जिसका मत मुख्य कर शाहपुरा स्थान मेवाड़ से चला है। वे 'राम राम' कहने को ही परम मन्त्र और इसी को सिद्धान्त मानते हैं। उनका एक ग्रन्थ कि जिसमें सन्तदास जी आदि की वाणी है, ऐसा लिखते हैं—

उनका वचन

भरम रोग तब ही मिट्या, रट्या निरंजन राइ।
तब जम का कागज फट्या, कट्या कर्म तब जाइ॥
साखी ॥ ६ ॥

अब बुद्धिमान् लोग विचार लेवें कि राम-राम करने से भ्रम जो कि अज्ञान है वा यमराज का पापानुकूल शासन अथवा किये हुए कर्म कभी छूट सकते हैं वा नहीं? यह केवल मनुष्यों को पापों में फँसाना और मनुष्य जन्म को नष्ट कर देना है।

अब इनका जो मुख्य गुरु हुआ है 'रामचरण' उसके वचन—

महमा नांव प्रताप की, सुणौ सरवण चित लाइ।
रामचरण रसना रटौ, क्रम सकल झड़ जाइ॥
जिन जिन सुकर्या नांव कूं, सो सव उतर्या पार।
रामचरण जो वीसर्या, सो ही जम के द्वार॥

राम विना सब झूठ बतायो।

राम भजत छूट्या सब क्रम्मा। चंद अरु सूर देह परकम्मा॥
राम कहे तिन कूं भै नाहीं। तीन लोक में कीरति गाहीं॥

राम रटत जम जोर न लागै।

राम नाम लिख पथर तराई। भगति हेति औतार ही धरही॥
ऊंच नीच कुल भेद विचारै। सो तो जनम आपणो हारै॥
संता के कुल दीसै नांही। राम-राम कह राम सम्हांही॥
ऐसो कुण जो कीरति गावै। हरि हरिजन को पार न पावे॥
राम संतां का अन्त न आवै। आप आपकी बुद्धि सम गावै॥

इनका खंडन—

प्रथम तो रामचरण आदि के ग्रन्थ देखने से विदित होता है कि यह ग्रामीण सादा सीधा मनुष्य था। न वह कुछ पढ़ा था, नहीं तो ऐसी गपड़ चौथ क्यों लिखता? यह केवल इनको भ्रम है कि 'राम राम' कहने से कर्म छूट जाँय, केवल ये अपना और दूसरों का जन्म खोते हैं। जम का भय तो बड़ा भारी है, परन्तु राज-सिपाही, चोर, डाकू, व्याघ्र, सर्प, वीछू और मच्छर आदि

का भय कभी नहीं छूटता। चाहे रात दिन 'राम राम' किया करें, कुछ भी नहीं होगा।

जैसे 'शक्कर शक्कर' कहने से मुख मीठा नहीं होता वैसे सत्य-भाषणादि कर्म किये बिना 'राम राम' करने से कुछ भी नहीं होगा, और यदि 'राम राम' कहना इनका राम नहीं सुनता, तो जन्म भर कहने से भी नहीं सुनेगा, और जो सुनता है, तो दूसरी बार भी 'राम राम' कहना व्यर्थ है। इन लोगों ने अपना पेट भरने और दूसरों का भी जन्म नष्ट करने के लिए पाखंड खड़ा किया है, सो यह बड़ा आश्चर्य हम सुनते और देखते हैं कि नाम तो धरा 'रामस्नेही' और काम करते हैं रांड स्नेही का जहाँ देखो वहाँ रांड ही रांड सन्तों को घेर रही हैं। यदि ऐसे-पाखंड न चलते तो आर्यावर्त्त देश की दुर्दशा क्यों होती! ये लोग अपने चेलों को जूंठ खिलाते हैं और स्त्रियाँ भी लम्बी पड़ के दण्डवत प्रणाम करती हैं। एकान्त में भी स्त्रियों और साधुओं की लीला होती रहती है।

अब दूसरी इनकी शाखा 'खेड़ापा' ग्राम मारवाड़ देश से चली है।

उसका इतिहास—एक रामदास नामक जाति का ढेढ़ बड़ा चालाक था। उसके दो स्त्रियाँ थीं। वह प्रथम बहुत दिन तक औघड़ होकर कुत्तों के साथ खाता रहा। पीछे वामी कूण्डापन्थी। पीछे 'रामदेव' का कामड़िया बना। (राजपूताने में 'चमार' लोग भगवे वस्त्र रंग कर 'रामदेव' आदि के गीत जिनको वे 'शब्द' कहते हैं, चमारों और अन्य जातियों को सुनाते हैं,वे 'कामड़िये' कहलाते हैं।) अपनी दोनों स्त्रियों के साथ गाता था। ऐसे घूमता-घूमता 'सीथिल' (यह जोधपुर के राज्य में एक बड़ा ग्राम है) में ढेढ़ों का 'गुरु रामदास' था, उससे मिला। उसने

उसको रामदास का पंथ बता के अपना चेला बनाया। उस रामदास ने खेड़ापुर ग्राम में जगह बनाई और इसका इधर मत चला।

उधर शाहपुरे में रामचरण का। उसका भी इतिहास ऐसा सुना है कि वह जयपुर का बनिया था। उसने 'दांतड़ा' ग्राम में एक साधु से वेष लिया और उसको गुरु किया और शाहपुरे में जाके टिक्की जमाई। भोले मनुष्यों में पाखंड की जड़ शीघ्र जम जाती है, जम गई। इन सब में ऊपर के रामचरण के वचनों के प्रमाण से चेला करके ऊँच नीच का कुछ भेद नहीं। ब्राह्मण से अन्त्यज पर्यन्त इसमें चेले बनते हैं। अब भी कूंडा-पर्थी से ही हैं, क्योंकि मट्टी के कूडों में ही खाते हैं। और साधुओं की जूठन खाते हैं। वेद-धर्म से माता-पिता संसार के व्यवहार से बहकाकर छुड़ा देते और चेना बना लेते हैं और 'राम नाम' को महामंत्र मानते हैं और इसी को छुच्छम' (सूक्ष्म) वेद भी कहते हैं।

'राम राम' कहने से अनन्त जन्मों के पाप से छूट जाते हैं, इसके बिना मुक्ति किसी की नहीं होती। जो श्वास और प्रश्वास के साथ 'राम राम' कहना बतावे उसको 'सत्यगुरु' कहते हैं और सत्यगुरु को परमेश्वर से भी बड़ा मानते हैं और उसकी मूर्ति का ध्यान करते हैं। साधुओं के चरण धोके पीते हैं। जब गुरु से चेला दूर जावे तो गुरु के नख और डाढ़ी के बाल अपने पास रख लेवे। उसका चरणामृत नित्य लेवे, रामदास और हर रामदास के वाणी के पुस्तक को वेद से अधिक मानते हैं। उसकी परिक्रमा और आठ दण्डवत् प्रणाम करते हैं और जो गुरु समीप हो तो गुरु को दण्डवत्त प्रणाम कर लेत हैं। स्त्री वा पुरुष को 'राम राम' एक सा ही मंत्रोपदेश करते हैं और नाम स्मरण

ही से कल्याण मानते, पुनः पढ़ने में पाप समझते हैं । इनकी साखी—

> पढताई पाने पड़ी, औ पूरब को पाप ।
> राम राम सुमर्यों विना, रहग्यो रीतो आप ॥
> वेद पुराण पढ़ गीता । राम भजन विन रह गये रीता ॥

ऐसे-ऐसे पुस्तक बनाये हैं, स्त्री को पति की सेवा करने में पाप और गुरु और साधु की सेवा में धर्म बतलाते हैं, वर्णाश्रम को नहीं मानते । जो ब्राह्मण रामस्नेही न हो तो उसको नीच और चंडाल, रामस्नेही हो तो उसको उत्तम जानते हैं, अब ईश्वर का अवतार नहीं मानते और रामचरण का वचन जो ऊपर लिख आये कि—

> भगति हेति औतार ही धर ही ॥

भक्ति और सन्तों के हित अवतार को भी मानते हैं इत्यादि पाखण्ड प्रपंच इनका जितना है सो सब आर्यावर्त्त देश का अहित-कारक हैं।)

सत्यार्थ प्रकाश के कारण वैदिक संस्कारों को श्रेष्ठ समझने वाले आर्य समाजी महाशय के प्रश्न का उत्तर देते हुए महात्मा गांधी ने कहा था, "सच के मानी मैं बता चुका हूँ । जो लोग दिल से हिस्सा ले सकें, जो एक सुर में गा सकें, वे ही हिस्सा लें, बाकी शान्त रहें । लेकिन यह तो छोटी बात हुई । बड़ी बात तो यह है कि दशरथ-नन्दन अविनाशी कैसे हो सकते हैं ? यह सवाल खुद तुलसीदास ने उठाया था और उन्होंने इसका जवाब भी दिया था । ऐसे सवालों का जवाब बुद्धि से नहीं दिया जा सकता । यह दिल की बात है । दिल ही जाने ।

शुरू में मैंने राम को सीता-पति के रूप में पाया । लेकिन जैसे-जैसे मेरा ज्ञान और अनुभव बढ़ता गया, वैसे-वैसे मेरा राम

अविनाशी और सर्वव्यापी बना है और है। इसका मतलब यह कि वह सीत-पति बना रहा, और साथ ही सीता-पति के माने भी बढ़ गये। संसार ऐसे ही चलता है। जिसका राम दशरथ राजा का कुमार ही रहा, उसका राम सर्वव्यापी नहीं हो सकता, लेकिन सर्वव्यापी राम का बाप दशरथ भी सर्वव्यापी बन जाता है। कहा जा सकता है कि यह सब मनमानी है --'जैसी जिसकी भावना, वैसा उसको होय।' दूसरा कोई चारा मुझे नज़र नहीं आता।

अगर आख़िरकार सब धर्म एक हैं तो हमें सब का एकीकरण करना है। अलग तो पड़े ही हैं और अलग मानकर हम एक-दूसरे से लड़ते हैं और जब थक जाते हैं, तो नास्तिक बन जाते हैं, और फिर सिवा 'हम' के न ईश्वर रहता है, न कुछ और! लेकिन जब समझ जाते हैं, तो हम कुछ नहीं रह जाते, ईश्वर ही सब कुछ बन जाता है - वह दशरथ-नन्दन, सीता-पति भरत वा लक्ष्मण का भाई है भी और नहीं भी। जो दशरथ नन्दन राम को न मानते हुए भी सबके साथ प्रार्थना में बैठते हैं, उनकी बलिहारी है? यह बुद्धिवाद नहीं। यहाँ मैं यह बता रहा हूँ कि मैं क्या करता हूँ, और क्या मानता हूँ।" रामचरितमानस के बालकाण्ड में गोस्वामी तुलसीदास जी ने प्रयाग निवासी भरद्वाज द्वारा याज्ञवल्क्य से इस प्रकार के प्रश्न कराये हैं:—

नाथ एक संशय बड़ मोरे। कर गत वेद तत्व सब तोरे॥
कहत मोहि लागत भय लाजा। जो न कहौं बड़ होइ अकाजा॥
दोहा—संत कहहिं अस नीति प्रभु. श्रुति पुरान जो गाव।
होइ न विमल विवेक उर, गुरु सन किये दुराव॥
अस विचारि प्रगटों निज मोहू। हरहु नाथ करि जन पर छोहू॥
राम नाम कर अमित प्रभावा। संत पुरान उपनिषद गावा॥
संतत जपत सम्भु अविनाशी। सिव भगवान ज्ञान गुन रासी॥

आकर चारि जीव जग अहहीं। कासी मरत परम पद लहहीं ॥
सोपि राम महिमा मुनि राया। सिव उपदेसु करत करि दाया ॥
रामु कवन प्रभु पूछौं तोही। कहहु बुझाइ कृपानिधि मोही ॥
एक राम अवधेश कुमारा। तिन्ह कर चरित विदित संसारा ॥
नारि विरह दुख लहेउ अपारा। भयउ रोप रन रावन मारा ॥
दोहा—प्रभु सोइ राम कि अपर कोउ, जाहि जपत त्रिपुरारि।
सत्य धाम सर्वज्ञ तुम, कहहु विवेक विचारि ॥
जैसे मिटै मोह भ्रम भारी। कहहु सो कथा नाथ विस्तारी ॥
याज्ञवल्लिक बोले मुसुकाई। तुमहिं विदित रघुपति प्रभुताई ॥
राम भगत तुम मन क्रम बानी। चतुराई तुम्हारि मैं जानी ॥
चाहहु सुनै राम गुन गूढ़ा। कीन्हेउ प्रश्न मनहुँ अति मूढ़ा ॥
तात सुनहु सादर मन लाई। कहउँ राम कै कथा सुहाई ॥
महा मोह महिषेसु बिसाला। राम कथा कलिकाल कराला ॥
राम कथा ससि किरनि समाना। संत चकोर करहिं जेहि पाना ॥
ऐसेइ संसय कीन्ह भवानी। महादेव तब कहा बखानी ॥
दोहा—कहौं सो मति अनुहारि अब, उमा संभु सम्वाद।
भयउ समय जेहि हेतु अब, सुनु मुनि मिटहिं विषाद ॥
एक बार त्रेता युग माहीं। सम्भु गये कुम्भज रिषि पाहीं ॥
संग सती जग जननि भवानी। पूजे रिषि अखिलेश्वर जानी ॥
राम कथा मुनि वर्ज बखानी। सुनी महेस परम सुख मानी ॥
रिषि पूछी हरि भगति सुहाई। कही सम्भु अधिकारी पाई ।
कहत सुनत रघुपति गुन गाथा। कछु दिन तहां रहे गिरिनाथा ॥
मुनि सन विदा मांगि त्रिपुरारी। चलेउ भवन संग दच्छ कुमारी ॥
तेहि अवसर भंजन महि भारा। हरि रघुवंश लीन्ह अवतारा ॥
पिता वचन तजि राज उदासी। दंडक वन विचरत अविनासी ॥
दोहा—हृदय विचारत जात हर, केहि विधि दरसन होइ।
गुप्त रूप अवतरेउ प्रभु, गये जान सब कोइ ॥

सोरठा—संकर उर अति छोभु, सती न जानहिं मर्म सोइ।
तुलसी दरसन लोभ, मन डरु लोचन लालची ॥
रावन मरनमनुज कर जाँचा। प्रभु विधिवचन कीन्हयह साँचा ॥
जो नहि जाऊँ रहै पछितावा। करत विचार न वनत वनावा ॥
एहि विधि भये सोच वस ईसा। ताही समय जाइ दससीसा ॥
लीन्ह नीच मारीचहिं संगा। भयउ तुरत सोइ कपट कुरंगा ॥
करि छल मूढ़ हरी वैदेही। प्रभु प्रभाव तस विदित न तेही ॥
मृग वधि वंधु सहित हरि आये। आश्रम देखि नयन जल छाये ॥
विरह विकल नर इव रघुराई। खोजत विपिन फिरत दोउ भाई ॥
कवहूँ योग वियोग न जाके। देखा प्रगट दुसह दुख ताके ॥
दोहा—अति विचित्र रघुपति चरित, जानहिं परम सुजान।
जे मति-मन्द विमोह वश, हृदय धरहिं कछु आन ॥
सम्भु समय तेहि रामहिं देखा। उपजा हिय अति हरख विशेषा ॥
भरि लोचन छवि सिंधु निहारी। कुसमय जानिन कीन्ह चिन्हारी॥
जय सच्चिदानंद जग पावन। अस कहि चलेउ मनोज नसावन ॥
चले जात सिय सती समेता। पुनि पुनि पुलकित कृपा निकेता ॥
सती सो दसा सम्भु की देखी। उर उपजा सन्देह विसेखी ॥
सकर जगत वन्द्य जगदीसा। सुर नर मुनि सव नावत सीसा ॥
तिन नृप सुतहिं कीन्ह परनामा। कहि सच्चिदानन्द परधामा ॥
भये मगन छवि तासु विलोकी। अजहुँ प्रीति उर रहित न रोकी ॥
दोहा—ब्रह्म जो व्यापक विरज अज, अकल अनीह अभेद ॥
सो कि देह धरि होय नर, जाहि न जानत वेद ॥
विष्णु जो सुर हित नर तनुधारी। सोउ सरवज्ञ यथा त्रिपुरारी ॥
खोजत सो कि अज्ञ इव नारी। ज्ञान धाम श्रीपति असुरारी ॥
सम्भु गिरा पुनि मृषा न होई। सिव सरवज्ञ जान सव कोई ॥
अस संसय मन भयउ अपारा। होय न हृदय प्रवोध प्रचारा ॥
यद्यपि प्रगट न कहेउ भवानी। हर अन्तरजामी सव जानी ॥

सुनहु सती तव नारि सुभाऊ। संसय अस न धरिय उर काऊ ॥
जासु कथा कुम्भज रिषि गाई। भगति जासु मैं मुनिहिं सुनाई ॥
सोइ मम इष्टदेव रघुबीरा। सेवत जाहि सदा मुनि धीरा ॥
छन्द—मुनि धीर योगी सिद्ध संतत बिमल मन जेहि ध्यावहीं।
कहि नेति निगम पुरान आगम जासु कीरति गावहीं ॥
सोइ राम व्यापक ब्रह्म भुवन निकायपति मायाधनी।
अवतरेउ अपने भगत हित निज तंत्र नित रघुकुल मनी ॥
सोरठा—लाग न उर उपदेस, यदपि कहेउ सिव बार बहु।
बोले बिहँसि महेस, हरिमाया बल जानि जिय ॥
जो तुम्हरे मन अति सन्देहू। तो किन जाय परीछा लेहू ॥
तब लगि बैठिअहौं बट छाहीं। जब लगि तुम ऐहहु मोहि पाहीं ॥

इस प्रकार सती को श्री रामचन्द्र की परीक्षा लेने श्री शिव जी ने भेज दिया और परिणाम यह हुआ कि फिर उस जन्म में वे सुख न पा सकीं। दूसरा जन्म पार्वती का लेना पड़ा और जब घोर तपस्या के बाद फिर श्री शिव जी को पति के रूप में पाकर उन्हें प्रसन्न कर पाया, तब बड़े ही विनीत भाव से श्री रामचन्द्र के सम्बन्ध में प्रश्न किया—

दोहा—जटा मुकुट सुर सरित सिर, लोचन नलिन बिसाल।
नीलकण्ठ लावन्य निधि, सोह बाल बिधु भाल ॥
बैठे सोह कामरिपु कैसे। धरे शरीर सान्त रस जैसे ॥
पारवती भल अवसर जानी। गईं सम्भु पहँ मात भवानी ॥
जानि प्रिया आदर अति कीन्हा। बामभाग आसन प्रभु दीन्हा ॥
बैठी सिव समीप हरषाई। पूरब जन्म कथा चित आई ॥
पति हिय हेतु अधिक अनुमानी। बिहँसि उमा बोली प्रिय बानी ॥
कथा जो सकल लोक हितकारी। सोइ पूछन चह सैल कुमारी ॥
बिस्वनाथ मम नाथ पुरारी। त्रिभुवन महिमा बिदित तुम्हारी ॥
चर अरु अचर नाग नर देवा। सकल करहि पद पङ्कज सेवा ॥

दोहा—प्रभु समरथ सरवज्ञ सिव, सकल कला गुन धाम ॥
जोग ज्ञान वैराग निधि, प्रनत कलप तरु नाम ॥
जो मोपर प्रसन्न सुख रासी। जानिय सत्य मोंहि निदासी ॥
तौ प्रभु हरहु मोर अज्ञाना। कहि रघुनाथ कथा विधि नाना ॥
जासु भवन सुरतरु तर होई। सह कि दरिद्र जनित दुख सोई ॥
ससि भूषन अस हृदय विचारी। हरहु नाथ मम मति भ्रम भारी ॥
प्रभु जे मुनि परमारथ वादी। कहहिं राम कहुँ ब्रह्म अनादी ॥
सेष सारदा वेद पुराना। सकल कहहिं रघुपति गुनगाना ॥
तुम पुनि राम नाम दिन राती। सादर जपहु अनङ्ग अराती ॥
राम सो अवधनृपति सुत सोई। की अज अगुन अलखगति कोई ॥
दोहा—जौ नृप तनय तौ ब्रह्म किमि, नारि विरह मति भोरि ॥
देखि चरित महिमा सुनत, भ्रमित बुद्धि अति मोरि ॥
जो अनीह व्यापक विभु कोऊ। कहहु बुझाय नाथ मोहि सोऊ ॥
अज्ञ जानि रिस जनि उर धरहू। जेहि विधि मोह मिटै सोइ करहू ॥

× × × ×

तुम त्रिभुवन गुरु वेद बखाना। आन जीव पाँवर का जाना ॥
प्रश्न उमा के सहज सुहाई। छल विहीन सुनि सिव मन भाई ॥
हर हिय राम चरित सब आये। प्रेम पुलक लोचन जल छाये ॥
श्री रघु नाथ रूप उर आवा। परमानन्द अमित सुख पावा ॥
दोहा—मगन ध्यान रस दंड जुग, पुनि मन बाहर कीन्ह ।
रघुपति चरित महेस तब, हरषित बरनै लीन्ह ॥
झूँठेउ सत्य जाहिं बिनु जाने। जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने ॥
जेहि जाने जग जाइ हेराई। जागे यथा सपन भ्रम जाई ॥
बंदौ बाल रूप सोइ रामू। सब सिधि सुलभ जपत जसु नामू ॥
मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवौ सो दशरथ अजिर विहारी ॥
करि प्रनाम रामहिं त्रिपुरारी। हरषि सुधा सम गिरा उचारी ॥
धन्य धन्य गिरिराज कुमारी। तुम समान नहिं कोउ उपकारी ॥

पूछेउ रघुपति कथा प्रसंगा। सकल लोक जग पावनि गंगा॥
तुम रघुबीर चरन अनुरागी। कीन्हेउ प्रस्न जगत हित लागी॥"

इसके बाद श्री शिव जी ने जो कुछ कहा वही गोस्वामी तुलसीदास जी का 'रामचरित मानस' है।

३०—ईश्वर कौन है और कहां है ?

बहुत दिनों के बाद 'हरिजन' के लिए लिखते समय महात्मा गांधी ने इस प्रकार के विचार प्रकट किये थे—"पाठकों ने देखा होगा कि पिछले हफ़्ते से मैंने 'हरिजन' के लिए लिखना शुरू किया है। यह कहाँ तक चलेगा, सो तो मैं नहीं जानता। ईश्वर को चलाना होगा, वहाँ तक चलेगा।

सोचने बैठता हूँ तो जिस हालत में लिखना बन्द किया था, वह आज भी कायम है। प्यारेलाल जी मुझसे दूर पड़े हैं और मेरी नजर में नोआखाली में बहुत महत्त्व का काम कर रहे हैं। जिसे मैंने महायज्ञ कहा है, उसमें वे भाग ले रहे हैं। टाइपिस्ट परशुराम जी ने अंग्रेजी विभाग का काम ठीक से हाथ में ले लिया था। वे अपनी इच्छा से अभी अहमदाबाद में जीवण जी की मदद कर रहे हैं। कनु गाँधी की मुझे बहुत मदद थी, मगर वह भी नोआखाली के महायज्ञ में पड़े हुए हैं। दूसरे मदद करने वाले कालवश या दूसरे कारणोंसे बहुत करके लिख नहीं सकते। ऐसी हालत में 'हरिजन' के लिए लिखने बैठना आम तौर पर पागलपन ही कहा जायगा। मगर लौकिक (दुनियावी) दृष्टि से जो करने लायक नहीं मालूम होता, ईश्वर के दरबार में वह शक्य और आसान हो सकता है। मैं मानता हूँ कि मैं ईश्वर का

नचाया नाचता हूँ। अगर यह मेरा भ्रम हो, तो भी मुझे प्रिय है।

यह ईश्वर कौन है, कैसा है? इसकी बहस करना यहाँ मुझे अच्छा लगेगा। मगर वह फिर कभी।

जो विषय हम सबके मन पर सवारी कर रहा है, उसकी चर्चा तो मैं रोज शाम की प्रार्थना के बाद करता ही हूँ। यहां जो लिख रहा हूँ वह तो सात दिन बाद प्रकट होगा। जो चीज आज हमारे जीवन में पहली जगह ले रही है, उसके लिए इतना अरसा लम्बा गिना जायगा। इसलिए 'हरिजन' के लिए जीवन के कायमी (शाश्वत) भागों पर बहस करना ठीक लगता है। उनमें एक ब्रह्मचर्य है। दुनिया मामूली चीजों की तरफ़ दौड़ती है। कायमी चीजों के लिए उसके पास वक्त ही नहीं रहता। तो भी हम विचार करें तो देखेंगे कि दुनिया कायमी चीजों पर ही निभती है।

ब्रह्मचर्य किसे कहते हैं? जो हमें ब्रह्म की तरफ ले जाय, वह ब्रह्मचर्य है। इसमें जननेन्द्रिय का संयम आ जाता है। वह संयम मन, वाणी और कर्म से होना चाहिए। अगर कोई मन से भोग करे और वाणी व स्थूल कर्म पर काबू रखे, तो यह ब्रह्मचर्य में नहीं चलेगा। 'मन चंगा तो कठौती में गंगा'। मन पर पूरा काबू हो जाय, तो वाणी और कर्म का संयम बहुत आसान हो जाता है। मेरी कल्पना का ब्रह्मचारी कुदरतन् तन्दुरुस्त होगा, उसका सिर तक नहीं दुखेगा, वह कुदरती तौर पर लम्बी उमर वाला होगा, उसकी बुद्धि तेज होगी, वह आलसी नहीं होगा, जिस्मानी या दिमागी काम करने में थकेगा नहीं और उसकी बाहरी सुघड़ता सिर्फ़ दिखावा न होकर भीतर का प्रतिबिम्ब होगी। ऐसे ब्रह्मचारी में स्थितप्रज्ञ के सब लक्षण देखने में

आवेंगे । ऐसा ब्रह्मचारी हमें कहीं दिखाई न पड़े, तो इसमें घबराने की कोई बात नहीं ।

जो स्थिरवीर्य हैं, जो ऊर्ध्वरेता हैं, उनमें ऊपर के लक्षण देखने में आवें तो कौन बड़ी बात है ? मनुष्य के जिस वीर्य में अपने जैसा जीव पैदा करने की ताक़त है, उस वीर्य को ऊँचे ले जाना ऐसी-वैसी बात नहीं हो सकती । जिस वीर्य के एक बूँद में इतनी ताकत है, उसके हज़ारों बूँदों की ताक़त का माप कौन लगा सकता है ?

यहाँ एक ज़रूरी बात पर विचार कर लेना चाहिए । पतंजलि भगवान् के पांच महाव्रतों में से किसी एक को लेकर उसकी साधना नहीं की जा सकती । यह हो सकता है, तो सिर्फ़ सत्य के बारे में ही, क्योंकि दूसरे चार तो सत्य में छिपे हुए हैं । और इस युग के लिए तो पांच की नहीं, ग्यारह व्रतों की ज़रूरत है । विनोबा ने उन्हें मराठी में सूत्र रूप में रख दिया है—

अहिंसा सत्य अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असंग्रह,
शरीर श्रम, अस्वाद, सर्वत्र भयवर्जन ।
सर्वधर्मी समानत्व, स्वदेशी स्पर्श भावना,
हीं एकादश सेवावीं नम्रत्वें व्रतनिश्चयें ।

ये सब व्रत सत्य के पालने में से निकाले जा सकते हैं । मगर जीवन इतना सरल नहीं । एक सिद्धान्त में से अनेक उप-सिद्धान्त निकाले जा सकते हैं । तो भी एक सबसे बड़े सिद्धान्त को समझने के लिए अनेक उप-सिद्धान्त जानने पड़ते हैं ।

यह भी समझना चाहिए कि सब व्रत समान हैं । एक टूटा कि सब टूटे । हमें आदत पड़ गई है कि सत्य और अहिंसा के व्रतभंग को हम माफ़ कर सकते हैं । इन व्रतों को तोड़ने वाले की तरफ़ हम उँगली नहीं उठाते । अस्तेय और अपरिग्रह क्या है, सो तो हम समझते ही नहीं । मगर माना हुआ ब्रह्मचर्य व्रत

टूटा, तो तोड़नेवाले का बुरा हाल होता है । जिस समाज में ऐसा होता है, उसमें कोई बड़ा दोष होना चाहिए ।

ब्रह्मचर्य का संकुचित अर्थ लेने से वह निस्तेज बनता है। उसका शुद्ध पालन नहीं होता, सच्ची कीमत नहीं आँकी जाती और दम्भ बढ़ता है । कम से-कम इस व्रत का पूरा स्थूल पालन भी अशक्य नहीं, तो बहुत कठिन तो होता ही है । इसलिए सब व्रतों को एक साथ लेना चाहिए । ऐसा हो तभी ब्रह्मचर्य की व्याख्या सिद्ध की जा सकती है । आज की भाषा में वह सच्चा ब्रह्मचारी है, जो एकादश व्रत का पालन मन से, वाणी से और कर्म से करता है ।

ब्रह्मचर्य एकादश व्रतों में से एक व्रत है । इस पर से यह कहा जा सकता है कि ब्रह्मचर्य की मर्यादा या बाड़ एकादश व्रतों का पालन है । मगर एकादश व्रतों को कोई बाड़ न माने । बाड़ तो किसी खास हालत के लिए ही होती है । हालत बदली और बाड़ भी गई । मगर एकादश व्रत का पालन तो ब्रह्मचर्य का ज़रूरी हिस्सा है । उसके बिना ब्रह्मचर्य का पालन नहीं हो सकता ।

आखिर में ब्रह्मचर्य मन की स्थिति (हालत) है । बाहरी आचार या व्योहार उसकी पहचान, उसकी निशानी है । जिस पुरुष के मन में जरा भी विषय-वासना नहीं रही, वह कभी विकार के वश नहीं होगा । वह किसी औरत को चाहे जिस हालत में देखे, चाहे जिस रूप-रंग में देखे, तो भी उसके मन में विकार पैदा नहीं होगा । यही स्त्री के बारे में भी समझना चाहिए । मगर जिसके मन में विकार उठा ही करते हैं, उसे सगी बहन या बेटी को भी नहीं देखना चाहिए । मैंने अपने कुछ मित्रों को यह नियम पालने की सलाह दी थी । और जिन्होंने इसका पालन किया है, उन्हें फायदा हुआ है । अपने बारे में मेरा यह तजरबा है कि जिन चीज़ों को देखकर दक्षिण अफ्रीका में मेरे मन

में कभी विकार पैदा नही हुआ था. उन्हीं से दक्षिण अफ्रीका से वापस आने पर मेरे मनमें विकार पैदा हुआ। और उसे शान्त करने में मुझे काफी मेहनत करनी पड़ी।

यह बात सिर्फ जननेन्द्रिय के बारे में ही सच थी ऐसा नहीं: इन्सान को शोभा न देने वाले डर के बारे में भी यही सच पड़ी और मैं शर्मिन्दा हुआ। बचपन में मैं स्वभाव से डरपोक था। दीये के बिना मैं आराम से सो नहीं सकता था। कमरे में अकेले सोना अपनी बहादुरी की निशानी समझता था। मुझे पता नहीं कि आज अगर मैं रास्ता भूल जाऊँ और काली रात में घने जङ्गल में भटकता होऊँ तो मेरी क्या हालत हो ? मेरा राम मेरे पास है, यह खयाल भी उस वक्त भूल जाऊँ तो ? अगर बचपन का डर मेरे मन में से बिल्कुल निकल गया हो, तो मैं मानता हूँ कि निर्जन जंगल में निडर रहना जननेन्द्रिय के संयम से भी ज्यादा मुश्किल है। जिसकी यह हालत हो, वह मेरी व्याख्या का ब्रह्मचारी तो नहीं ही गिना जायगा।

ब्रह्मचर्य की जो मर्यादा हम लोगों में मानी जाती है, उसके मुताबिक ब्रह्मचारी को स्त्रियों, पशुओं और नपुंसकों के बीच में नहीं रहना चाहिए। ब्रह्मचारी अकेली स्त्री या स्त्रियों की टोली को उपदेश न करे। स्त्रियों के साथ एक आसन पर न बैठे। स्त्रियों के शरीर का कोई हिस्सा न देखे। दूध, दही, घी वगैरह चिकनी चीजें न खाये। स्नान-लेपन न करे। यह सब मैंने दक्षिण-अफ्रीका में पढ़ा था। वहाँ जननेन्द्रिय का संयम करने वाले पश्चिम के स्त्री-पुरुषों के बीच मैं रहता था। मैं उन्हें इन सब मर्यादाओं को तोड़ते देखता था। मैं खुद भी उनका पालन नहीं करता था। यहाँ आकर भी नहीं कर सका। दूध, दही वगैरह मैं हठ-पूर्वक छोड़ता था। उसका कारण दूसरा था। इसमें मैं हारा। अभी भी अगर मुझे ऐसी कोई वनस्पति मिल

जाय जो दूध-घी की जरूरत पूरी कर सके, तो मैं फ़ौरन दूध वग़ैरह प्राणिज चीज़ें छोड़दूँ और मेरी ख़ुशी का पार न रहे। मगर यह तो दूसरी बात हुई ।

ब्रह्मचारी कभी निर्वीर्य नहीं होता । वह रोज वीर्य पैदा करता है और उसे इकट्ठा करके रोज़-रोज़ बढ़ाता जाता है। उसे कभी बुढ़ापा नहीं आता। उसकी बुद्धि कभी कुण्ठित नहीं होती।

मुझे लगता है कि जो ब्रह्मचारी बनने की सच्ची कोशिश कर रहा है, उसे भी ऊपर बताई हुई बाड़ों(मर्यादाओं)की जरूरत नहीं है। ब्रह्मचर्य ज़बरदस्ती से यानी मनसे विरुद्ध जाकर पालने की चीज़ नहीं। वह जबरदस्ती नहीं पाला जा सकता । यहाँ तो मन को वश करने की बात है। जो जरूरत पड़ने पर स्त्री को छूने से भागता है, वह ब्रह्मचारी बनने की कोशिश ही नहीं करता ।

इस लेख का मतलब यह नहीं कि लोग मनमानी करें। इसमें तो सच्चा संयम पालने की बात बताई गई है । दंभ या ढोंग के लिए यहाँ कोई जगह हो ही नहीं सकती।जो छुपे तौर से विषय-सेवन के लिए इस लेख का इस्तेमाल करेगा, वह दम्भी और पापी ही गिना जायगा ।

ब्रह्मचारी को नकली बाड़ों से भागना चाहिए। उसे अपने लिए अपनी बाड़ बना लेनी है। जब उसकी ज़रूरत न रहे, तब उसे तोड़ देना चाहिए। इस लेख का मक़सद तो यह है कि हम सच्चे ब्रह्मचर्य को पहचानें। उसकी कीमत जान लें और ऐसे कीमती ब्रह्मचर्य का पालन करें। इसमें देश-सेवा का सच्चा ज्ञान रहा है। इससे देश-सेवा करने की शक्ति भी बढ़ती है ।

ब्रह्मचर्य क्या है यह बताते हुए मैंने लिखा है कि ब्रह्म यानी ईश्वर तक पहुँचने का जो आचार (जिन्दगी का तरीक़ा) होना चाहिए, वह ब्रह्मचर्य है। लेकिन इतना जान लेने से ईश्वर के

रूप का पता नहीं चलता। अगर उसका ठीक पता चल जाय, तो हम ईश्वर की तरफ़ जाने का ठीक रास्ता भी जान सकते हैं।

ईश्वर मनुष्य नहीं है। इसलिए वह किसी मनुष्य में उतरता है या अवतार लेता है. ऐसा कहें तो वह पूरा सत्य नहीं है। एक तरह से, ईश्वर किसी खास मनुष्य में उतरता है ऐसा कहने का मतलब सिर्फ इतना ही हो सकता है कि वह मनुष्य ईश्वर के ज्यादा नजदीक है। उसमें हमें ज्यादा ईश्वरीपन दिखाई देता है। ईश्वर तो सब जगह हाज़िर है। वह सब में मौजूद है। इसलिए हम सब ईश्वर के अवतार हैं। मगर ऐसा कहने से कोई मतलब हल नहीं होता।

राम, कृष्ण वगैरह को हम अवतार कहते हैं, क्योंकि उनमें लोगों ने ईश्वर के गुण देखे। आखिर तो राम, कृष्ण वगैरह मनुष्य की खयाली दुनिया में बसते हैं और उसकी खयाली तसवीर ही हैं। इतिहास में ऐसे लोग हो गये या नहीं इसके साथ इन कल्पना की तसवीरों का कोई सम्बन्ध नहीं। कई बार हम इतिहास के राम और कृष्ण को ढूँढ़ते ढूँढ़ते मुश्किलों में पड़ जाते हैं और हमें कई तरह की दलीलों का सहारा लेना पड़ता है।

सच बात तो यह है कि ईश्वर एक शक्ति (ताक़त) है, तत्व है, शुद्ध चैतन्य है, सब जगह मौजूद है। मगर हैरानी की बात यह है कि ऐसा होते हुए भी सबको उसका सहारा या फ़ायदा नहीं मिलता, या यों कहें कि सब उसका सहारा पा नहीं सकते।

बिजली एक बड़ी ताक़त है। मगर सब उससे फ़ायदा नहीं उठा सकते। उसे पैदा करने का अटल क़ानून है। उसके मुताबिक काम किया जाय तभी बिजली पैदा की जा सकती है। बिजली जड़ है, बेजान चीज है। उसके इस्तेमाल का क़ायदा चेतन मनुष्य मेहनत करके जान सकता है। जिस चेतनामय बड़ी भारी

शक्ति को हम ईश्वर कहते हैं. उसके इस्तेमाल का भी नियम तो है ही। लेकिन यह चीज़ बिलकुल साफ है कि उस नियम को ढूँढने के लिए बहुत ज्यादा मेहनत की जरूरत है। उस नियम या क़ायदे का छोटा-सा नाम है ब्रह्मचर्य है।

ब्रह्मचर्य को पालने का सीधा रास्ता राम नाम है। यह मैं अपने तज़रबे से कह सकता हूँ। तुलसीदास जैसे भक्त ऋषि-मुनियों ने तो वह रास्ता बताया ही है। मेरे अनुभव का कोई जरूरत से ज्यादा मतलब न निकाले। राम-नाम सब जगह मौजूद रहने वाली रामबाण दवा है, यह शायद मैंने पहले-पहल उरुलीकांचन में ही साफ-साफ जाना था। जो उसका पूरा इस्ते-माल जानता है, उसे जगत् में कम-से-कम बाहरी काम करना पड़ता है। फिर भी उसका काम बड़े-से-बड़ा होता है।

इस तरह विचार करते हुए मैं कह सकता हूँ कि ब्रह्मचर्य की रक्षा के जो नियम माने जाते हैं, वे तो खेल ही हैं; सच्ची और अमर रक्षा तो राम-नाम ही है। राम जब जीभ से उतर कर हृदय में बस जाता है, तभी उसका पूरा चमत्कार दिखलाई देता है। यह अचूक साधत पाने के लिए एकादश व्रत तो हैं ही। मगर कई साधन ऐसे होते हैं कि उनमें से कौन-सा साधन (पाने का तरीका) और कौन सा साध्य (पाने की चीज) है, यह फर्क करना मुश्किल हो जाता है। एकादश व्रतों में से सत्य को ही लें, तो पूछा जा सकता है कि क्या सत्य साधन है और राम साध्य? या, राम साधन है और सत्य साध्य है?

मगर मैं सीधी बात पर आऊँ। ब्रह्मचर्य का आज का माना हुआ अर्थ लें तो वह है—जननेन्द्रिय पर काबू पाना। इस संयम का सुनहला रास्ता और उसकी अमर रक्षा राम-नाम है। इस राम-नाम को सिद्ध करने के कायदे या नियम तो हैं ही।

बापू के प्रिय गीत

[१]

वन्दे मातरम्
सुजलां, सुफलां, मलयज शीतलाम्,
शस्यश्यामलां मातरम् ॥ वन्दे मातरम् ॥
शुभ्र ज्योतनां, पुलकित यामिनीम्,
फुल्ल कुसमित-द्रुमदल शोभनीम्,
सुहासिनीम्, सुमधुर भाषिणीम्,
सुखदां, वरदां मातरम् ॥ वन्दे मातरम् ॥

[२]

उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो सोवत है सो खोवत है,
जो जागत है सो पावत है ॥ उठ॥
टुक नींद से अखियाँ खोल जरा,
और अपने प्रभु से ध्यान लगा।
यह प्रीति करन की रीति नहीं,
प्रभु जागत है तू सोवत है ॥उठ॥
जो कल करना है आज करले,
जो आज करना है अब कर ले।
जब चिड़ियों ने चुन खेत लिया,
तो फिर पछिताए क्या होवत है ॥उठ॥

नादान भुगत करनी अपनी,
ए पापी पाप में चैन कहाँ।
जब पाप गठरियां शीश धरी,
तो शीश पकड़ क्यों रोवत है ॥उठा॥

[३]

वैष्णव जन तो तेने कहिए जे पीड़ पराई जाणे रे,
पर दुःखे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे।
सकल लोक मां सहुने वंदे निन्दा न करे केनी रे,
पांच काल मन निश्चल राखें, धन धन जननी तेनी रे।
समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, पर स्त्री जेने मात रे,
जिह्वा थकी असत्य न वोले, पन धन नव झाले हाथ रे।
मोह माया नहि व्यापे जेने, दृढ़ वैराग्य जना मनमा रे,
रामनाम सु ताली लानी. सकल तीरथ तेना तनमां रे।
वण लोभी ने कपट रहित छे, कामक्रोध निवार्या रे,
भणे नरसैयों तेनु दरसन करता, कुल एकोतेर तार्या रे।

———